स्टेट इनिशिएटिव फॉर क्वॉलिटि एज्यूकेशन–राजस्थान

आदर्श विद्यालय योजना

शिक्षक प्रशिक्षण मॉड्यूल

2016

(खण्ड – एक)

राजस्थान माध्यमिक शिक्षा परिषद्

माध्यमिक शिक्षा विभाग, राजस्थान सरकार

अनुक्रमणिका

क्रम	विवरण	पृष्ठ

खण्ड–एक

भाग–1	–	अवधारणा, संरचना एवं प्रक्रिया	1–22
भाग–2	–	परिप्रेक्ष्य – विकास संवाद (प्रथम)	23–78
		i. शिक्षा का अधिकार	
		ii. गुणवत्तापूर्ण शिक्षा	
		iii. अधिगम एवं बाल केन्द्रित शिक्षाशास्त्र	
		iv. सतत एवं समग्र आकलन	
भाग–3	–	परिप्रेक्ष्य – विकास संवाद (द्वितीय)	79–105
		i. प्राथमिक कक्षाओं में कला एवं कार्य शिक्षा	
		ii. समावेशी शिक्षण	
		iii. जेण्डर संवेदनशीलता	

एस आई क्यू ई कार्यक्रम : सहभागी सस्थाएँ

निदेशालय, माध्यमिक शिक्षा विभाग
निदेशालय, प्रारंभिक शिक्षा विभाग

राजस्थान माध्यमिक शिक्षा परिषद्

राजस्थान प्रारम्भिक शिक्षा परिषद्

एस.आई.ई.आर.टी., उदयपुर

बोध शिक्षा समिति

यूनिसेफ, जयपुर

मॉड्यूल निर्माण में तकनीकी सहयोग : बोध शिक्षा समिति एवं यूनिसेफ, जयपुर

सत्यमेव जयते

स्टेट इनिशिएटिव फॉर क्वॉलिटि एज्यूकेशन–राजस्थान

आदर्श विद्यालय योजना

शिक्षक प्रशिक्षण मॉड्यूल

2016

खण्ड–एक

RCSE

राजस्थान माध्यमिक शिक्षा परिषद्
माध्यमिक शिक्षा विभाग–राजस्थान सरकार

प्रशिक्षण मॉड्यूल निर्माण समूह

राजस्थान माध्यमिक शिक्षा परिषद्

1. सुश्री तूलिका सैनी, उपायुक्त–एसआईक्यूई
2. सुश्री ममता दाधीच, राज्य समन्वयक, एसआईक्यूई
3. डा. गोविन्द सिंह, उपनिदेशक, प्रशिक्षण

यूनिसेफ, जयपुर

1. सुश्री सुलग्ना रॉय, शिक्षा विशेषज्ञ
2. श्री साशा प्रियो, राज्य सलाहकार–आरसीएसई

बोध शिक्षा समिति

- श्री योगेन्द्र भूषण (निदेशक बोध शिक्षा समिति) : समूह समन्वयक
- सुश्री कुसुम विष्ट, (सीनियर फैलो–हिन्दी ; ईआरसी)
- सुश्री लेखा मोहन (सीनियर फैलो–पर्यावरण अध्ययन ; ईआरसी),
- श्री राजेश कुमार शर्मा (सीनियर फैलो–गणित ; ईआरसी),
- सुश्री चेतना टण्डन (सीनियर फैलो–कला एवं संगीत ; ईआरसी)
- श्री प्रेम नारायण (बोध सलाहकार, निदेशालय माध्यमिक शिक्षा),
- सुश्री दिव्या सिंह (सीनियर फैलो–शोध ; ईआरसी)
- सुश्री नयन महरोत्रा (सीनियर फैलो–अंग्रेजी ; ईआरसी)
- श्री विनीत पंवार (सलाहकार एसआईईआरटी, उदयपुर)
- श्री उमाशंकर शर्मा (फैलो–ईआरसी)

जिला समर्थक अध्येता (डीएसएफ) – बोध एवं यूनिसेफ

गणित : • श्री धीरेन्द्र • श्री राजेश शर्मा • श्री जगदीश • श्री छोटू राम

हिन्दी : • श्री भागचन्द • सुश्री सीमा कुमावत • श्री सन्नी पाल • श्री मनिन्दर (हिन्दी)

अंग्रेजी : • श्री संजय पंडित • श्री नरेन्द्र शर्मा • सुश्री ज्योति • श्री अभिषेक (अंग्रेजी)

पर्या. अध्ययन : • श्री पंकज नोटियाल • श्री मनोज • श्री रामकिशन (पर्यावरण अध्ययन)

कला शिक्षा : • श्री अष्टम नीलकण्ठ

ग्राफ़िक्स डिज़ाइन व कम्प्यूटर कार्य :

श्री दीनदयाल शर्मा
वरिष्ठ समन्वयक, बोध
श्री के.के. चौधरी
सहवरिष्ठ समन्वयक, बोध

प्रूफ एडिटिंग (बोध) :

सुश्री चेतना टण्डन (सीनियर फैलो, ईआरसी)
सुश्री कुसुम विष्ट (सीनियर फैलो, ईआरसी)
सुश्री मीनाक्षी अग्रवाल (सीनियर फैलो, ईआरसी)
सुश्री अपूर्वा रंजन (फैलो, ईआरसी)

भाग–1

अवधारणा, संरचना एवं प्रक्रिया

- प्रशिक्षण की सामान्य दृष्टि
- उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम
- प्रशिक्षण के मुख्य आयाम
- प्रशिक्षण का प्रक्रियात्मक स्वरूप
- दिवसवार कार्यक्रम अनुसूची
- प्रशिक्षण पर एक दृष्टिपात

1. प्रशिक्षण की सामान्य दृष्टि

अ. पृष्ठभूमि एवं वृहद लक्ष्य

''स्टेट इनिशिएटिव फॉर क्वॉलिटि एज्यूकेशन'' प्राथमिक कक्षाओं हेतु चलाए जाने वाला राजस्थान राज्य का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम है। यह कार्यक्रम हमारे समक्ष बाल केन्द्रित शिक्षण विधा एवं शैक्षणिक उपलब्धियों में समतुल्यता के सरोकारों के आधार पर गुणात्मक बदलाव की रूपरेखा प्रस्तुत करता है। माध्यमिक शिक्षा विभाग के अन्तर्गत चलाई जा रही ''आदर्श विद्यालय योजना'' एवं प्रारम्भिक शिक्षा विभाग के अन्तर्गत चलाई जा रही ''उत्कृष्ट विद्यालय योजना'', मूलतः इस विचार पर आधारित हैं कि सर्वप्रथम छोटे पैमाने (स्मॉल स्केल) पर ऐसे विकल्पों को ज़मीनी स्तर पर मूर्त रूप देने की ज़रूरत है, जो लक्ष्यों के अनुरूप गुणवत्ता को सही मायनों में स्थापित कर सकें, तभी व्यापक स्तर पर वांछनीय बदलावों को यथार्थ बनाया जा सकता है।

वृहद् गुणात्मक बदलाव को सुनिश्चित करने वाले किसी भी कार्यक्रम के लिए बदलावों के 'वास्तविक स्वरूप एवं प्रक्रियाओं' का विकास सबसे बड़ी चुनौती होती है। इस संबंध में जिस स्तर पर बदलाव अपेक्षित हैं, उसकी नींव विकेन्द्रित रूप से क्षमताओं के विकास के द्वारा ही रखी जा सकती है। इस प्रक्रिया के तहत सामर्थ्यवान व्यक्तियों एवं संस्थानों को विकसित करने की ज़रूरत है जो आवश्यक बदलाव के वास्तविक एवं सार्थक प्रदर्शन में अपनी भूमिका निभा सकें। एसआईक्यूई कार्यक्रम की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए स्पष्ट है कि क्षमताओं को सुदृढ़ एवं विकेन्द्रित रूप में विकसित किया जाए।

कार्यक्रम की पृष्ठभूमि एवं मूल सरोकारों के अन्तर्गत आने वाले वृहद् लक्ष्यों के आधार पर शिक्षक प्रशिक्षण का जो स्वरूप उभरता है, उसके अन्तर्गत प्रारंभिक प्रशिक्षण को क्षमता संवर्धन की एक दीर्घकालिक प्रक्रिया के प्रारम्भ के रूप में देखा जाना चाहिए।

के.आर.पी. समूह की भूमिका की पृष्ठभूमि में प्रशिक्षणों द्वारा क्षमता संवर्धन की एक ऐसी प्रक्रिया की शुरुआत की जा चुकी है, जिसके द्वारा एक ऐसे सशक्त समूह का निर्माण किया जा सके जो मात्र दूसरों के क्षमता संवर्धन तक सीमित न रहे बल्कि वैकल्पिक गुणात्मक नवाचारों का सशक्त उदाहरण भी प्रस्तुत कर सकें एवं उनके द्वारा अपने–अपने विद्यालयों/संस्थानों में भी उद्देश्यों के अनुरूप गुणात्मक बदलाव ला सकें जो औरों के लिए संसाधन (Resource) की भूमिका निभा सकें। इसी संदर्भ में आपके साथ 6 दिवसीय प्रशिक्षण में गहनता से संवाद किया गया है।

ब. मुख्य संदर्भ व्यक्ति (केआरपी) समूह का गठन

क्योंकि आप के.आर.पी. समूह के सदस्य चुने गए हैं, आपके लिए यह जानना महत्त्वपूर्ण है कि इस समूह का गठन किस तरह किया गया है। एसआईक्यूई कार्यक्रम के एक वर्ष के क्रियान्वयन की प्रक्रिया एवं उसके अन्तर्गत किए गए क्षमता संवर्धन के प्रयासों से जिला स्तर पर जो व्यक्ति स्वाभाविक रूप से उभरकर सामने आए हैं, उन्हीं का केआरपी के रूप में चयन किया गया है। चयनित समूह में एक बड़ा भाग उन साथियों का है

जो कि एसआईक्यूई कार्यक्रम के अन्तर्गत शुरुआती उन्मुखीकरणों एवं अपने विद्यालयों में क्रियान्वयन या अन्य मंचों पर सक्रिय भूमिका निभा पाए हैं।

सर्वप्रथम के.आर.पी. चयन हेतु एक सटीक प्रक्रिया का विकास किया गया। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत जिला स्तरीय शिक्षा अधिकारियों एवं जिला समर्थन अध्येता (डीएसएफ) द्वारा जिलेवार के.आर.पी. समूह का चयन किया गया। चयन प्रक्रिया की रूपरेखा कुछ इस प्रकार प्रस्तुत की जा सकती है।

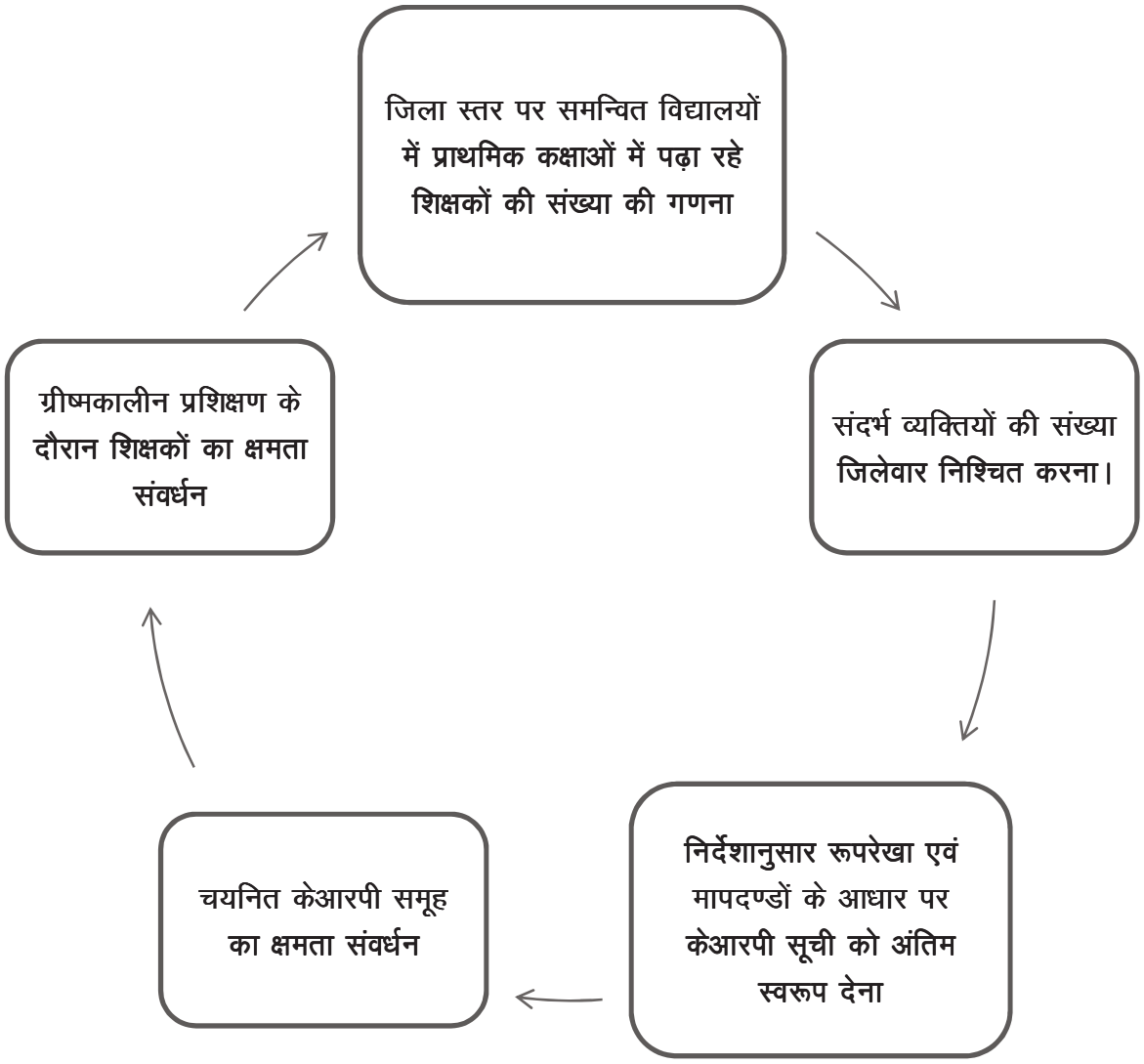

2. शिक्षक प्रशिक्षण के उद्देश्य एवं अपेक्षित परिणाम

शिक्षक प्रशिक्षण में मुख्य रूप से जिन उद्देश्यों पर एवं जिस रीति से काम किया जाना है उनसे प्रशिक्षण के निम्न परिणामों की अपेक्षा की जा सकती है –

- सभी बच्चों के लिए समतामूलक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के विमर्श के विकास को समझें। इस विषय में नीतिगत बदलावों के प्रमुख ऐतिहासिक बिन्दुओं को जानें।
- समतुल्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को प्रत्येक बच्चे के अधिकार के रूप में देखने से हर स्तर पर सोच एवं व्यवहार में आने वाले बदलाव को देख सकें।
- पाठ्यचर्या में दिए गए लक्ष्यों, बाल केन्द्रित शिक्षा एवं समग्र एवं सतत मूल्यांकन के मूल स्वरूप को जान सकें एवं इन तीनों पक्षों के संरेखीकरण/सुसंगति के महत्त्व को जान सकें।
- बच्चों द्वारा ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया एवं उसमें बच्चों की आयु एवं संदर्भ की भूमिका के महत्त्व को समझ पाएँ।
- एसआईक्यूई कार्यक्रम के वृहद स्वरूप को जानें एवं उसके अन्तर्गत अपनी भूमिका पर स्पष्टता हासिल करें।
- एसआईक्यूई कार्यक्रम के अन्तर्गत उपयोग में लिए जाने वाले सभी प्रकार के दस्तावेजों एवं सामग्रियों के प्रयोग को समझ पाएँ।
- अपने विषय विशेष की प्रकृति एवं पाठ्यचर्या, शिक्षण विधा एवं आकलन की बारीकियों को जानें। साथ ही साथ उसके अन्तर्गत व्यवहारिक प्रक्रियाओं के महत्त्वपूर्ण चरणों के सम्बन्ध में स्पष्टता अर्जित कर सकें।
- व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से अपने–अपने विषय के अन्तर्गत प्रयुक्त सामग्रियों जैसे कि शिक्षण अधिगम सामग्री, कार्यपत्रक, शिक्षण अधिगम योजना एवं कक्षा–कक्षीय प्रक्रियाओं के प्रारूपों का निर्माण कर सकें जिन्हें विद्यालय स्तर पर अपनाया जा सकता है।

3. शिक्षक प्रशिक्षण के मुख्य आयाम

SIQE कार्यक्रम के अन्तर्गत वार्षिक शिक्षक प्रशिक्षण सबसे महत्त्वपूर्ण अवसर है, जिसके माध्यम से बालकेन्द्रित एवं गतिविधि आधारित शिक्षण और सतत, समग्र एवं रचनात्मक आकलन से सम्बन्धित प्रक्रियाओं को सभी शिक्षकों तक पहुँचाया जा सकता है।

शिक्षक प्रशिक्षण में जिन तीन आयामों पर कार्य किया जाना है वे हैं –

परिप्रेक्ष्य विकास (Perspective Development)	प्रस्तावित उपागमों की जानकारी एवं समझ विकसित करना	कौशल एवं अभ्यास
• सभी बच्चों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के विचार के प्रति सकारात्मक मनोवृत्ति एवं परिप्रेक्ष्य निर्मित करना। • शिक्षक के रूप में अपनी भूमिका के संदर्भ में सकारात्मक दृष्टिकोण का निर्माण करना।	• एस.आई.क्यू.ई. कार्यक्रम के बारे में समझ विकसित करना। • विषयगत तथा कक्षा–कक्षीय संदर्भ में पाठ्यचर्चा, शिक्षण एवं मूल्यांकन पर गहन समझ विकसित करना। • परम्परागत शिक्षण विधाओं के संदर्भ में समालोचनात्मक समीक्षा एवं नवाचार के औचित्य पर समझ विकसित करना। • पाठ्यमक्रम, पाठ्यपुस्तकों एवं सीसीई दस्तावेज़ों की सम्पूर्ण समझ एवं इसके शिक्षण प्रक्रिया के साथ अन्तर्संबंध को समझना।	• कक्षा–कक्षीय प्रक्रियाओं में गुणात्मक बदलाव लाने हेतु मुख्य कौशलों पर कार्य कर पाना। • कुछ प्रारूपों की तैयारी व उनके प्रस्तुतिकरण द्वारा प्रारम्भिक अभ्यास प्राप्त करना।

प्रशिक्षण हेतु रखे गए प्रमुख लक्ष्यों को सम्बोधित करने के लिए मुख्य रूप से 3 प्रकार के सत्रों की संकल्पना की गई है, जिनके ज़रिए प्रतिभागियों के परिप्रेक्ष्य, समझ एवं कौशलों पर कार्य किया जाना प्रस्तावित है। तीनों सत्र इस तरीके से बनाए गए हैं कि किसी एक पक्ष एवं सरोकार पर निर्मित हुई समझ अगले सत्र को आधार प्रदान करे।

सत्रों के प्रमुख प्रकार –

1. संवाद सत्र	2. तकनीकी सत्र	3. कार्यशाला सत्र
परिप्रेक्ष्य एवं अभिवृत्ति विकास	विषयवार कक्षा–कक्षीय प्रक्रियाओं की समझ बनाना	समेकन, स्वाध्याय एवं तैयारी

सत्रों का नियोजन कुछ इस तरीके से किया गया है कि प्रतिदिन *सुबह का सत्र परिप्रेक्ष्य या दृष्टिकोण* से सम्बन्धित सैद्धांतिक सरोकारों एवं प्रश्नों पर सार्थक संवाद स्थापित करने एवं समझ को विकसित करने पर आधारित होगा। यह सत्र सम्पूर्ण समूह के साथ होगा। *दोपहर के सत्र विषयगत तकनीकी* पहलुओं को समझने एवं अभ्यास को सम्बोधित करेंगे और चार विषयगत समूहों (हिन्दी, गणित, पर्यावरण अध्ययन एवं अंग्रेजी) में सम्पन्न होंगे। *कार्यशाला–सत्र* उसी समझ को व्यवस्थित एवं व्यावहारिक स्वरूप देने पर आधारित होगा, जिन्हें *सायंकालीन सत्रों* में छोटे–छोटे समूहों में करवाया जाना है।

सत्रों के बीच अंतर्संबंध

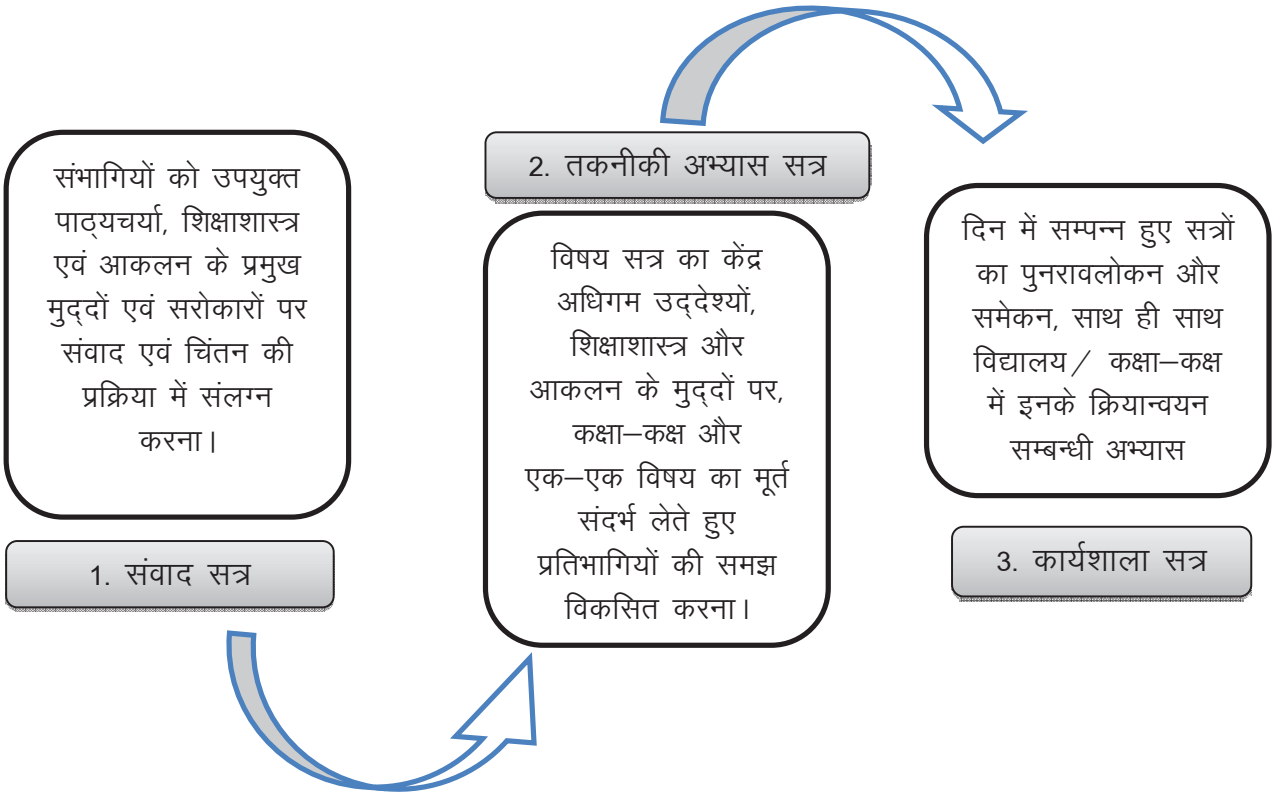

1. परिप्रेक्ष्य एवं अभिवृत्ति विकास :

इस भाग के अन्तर्गत आ रहे सत्रों का प्रमुख लक्ष्य है सभी बच्चों के लिए समतामूलक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की अवधारणा के बारे में एक स्पष्ट दृष्टि का निर्माण करना जो उसके मुख्य आयामों एवं ऐतिहासिक पक्षों की जानकारी पर आधारित हो। जब एक वास्तविक संवाद की प्रक्रिया द्वारा दृष्टिकोण संबंधित महत्त्वपूर्ण बदलाव हमारे विश्वासों एवं मान्यताओं में आते हैं, तब वे हमारे कार्य एवं वृत्ति में भी परिलक्षित होते हैं। इस प्रकार के बदलाव के आधार पर ही सही मायनों में नवाचारों एवं नवीन तरीकों के प्रति बेहतर स्वीकारोक्ति स्थापित की जा सकती है। साथ ही स्वयं की भूमिका के प्रति संभागी भी आशान्वित होते हैं। अतः यह सत्र सही मायनों में प्रशिक्षण की आधारशिला के रूप में उभरकर आते हैं एवं कार्यक्रम के दूरगामी लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए इनका महत्त्व और भी बढ़ जाता है। आगे आने वाले सत्रों में भी प्रमुख रूप से उन्हीं मुद्दों पर विषय के संदर्भ में तकनीकी कार्य किया जाना है, जिससे शिक्षक सही मायनों में एक वास्तविक एवं समग्र दृष्टिकोण का निर्माण कर सकें और सिद्धान्तों को कक्षाकक्षीय प्रश्नों, स्थिति एवं व्यवहार से जोड़ सकें।

2. विषयगत शिक्षण एवं आकलन का ज्ञान एवं समझ :

यह क्षेत्र प्रमुख रूप से कार्यक्रम में सुझाई गई अवधारणाओं एवं प्रक्रियाओं को विषयवार कक्षाकक्षीय कार्य के संदर्भ में जानने–समझने पर केन्द्रित है। यह प्राथमिक रूप से पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकों, शिक्षण विधा एवं आकलन के सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक पहलुओं पर समझ निर्माण को लक्षित करता है। इसके अन्तर्गत विषय शिक्षण से जुड़े हुए अहम पहलू, आकलन से संबंधित प्रक्रियाएँ एवं प्रयुक्त सामग्रियों की जानकारी भी सम्मिलित है। निम्न बिन्दुओं को सत्रों में संबोधित किया जाना प्रस्तावित है।

- पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तक, शिक्षण विधा एवं आकलन पद्धति की प्रस्तावित रूपरेखा के मुख्य सिद्धांतों एवं प्रक्रियाओं के मन्तव्यों एवं आधारों को जानना।
- उनसे सम्बन्धित पूर्व विचारों एवं प्रक्रियाओं की आलोचना को समझना।
- प्रस्तावित रूपरेखा की बारीकियों को विस्तार से समझना एवं उसके प्रायोगिक स्वरूप पर स्पष्टता बनाना।
- प्रस्तावित स्वरूप के प्रमुख अवयवों के संरेखीकरण/सुसंगति को समझना एवं उसकी आवश्यकता को जानना।

3. कौशल एवं अभ्यास :

इन सत्रों का मुख्य उद्देश्य शिक्षकों को अपनी कक्षाओं में नई विधाओं से कार्य करने के लिए तैयार करना है। इस प्रशिक्षण के माध्यम से यह अपेक्षित है कि शिक्षक अपनी कक्षा–कक्षीय प्रक्रियाओं में बदलाव ला सकेंगे व गुणवत्ता को सुनिश्चित करने हेतु कार्यक्रम का गुणात्मक क्रियान्वयन करने का प्रयास करेंगे।

4. प्रशिक्षण का प्रक्रियात्मक स्वरूप

प्रस्तुत मॉड्यूल में कार्यप्रणाली को एक व्यापक तरीके से देखने का प्रयास किया गया है। प्रक्रियात्मक पहलुओं को किसी खास विषयवस्तु को प्रभावी रूप से संप्रेषित मात्र करने के तरीके के रूप में नहीं देखा गया है, बल्कि वृहद् उद्देश्यों के स्वरूप के अभिन्न अंग की तरह देखा गया है। इस मान्यता का मूल आधार यह है कि कार्यप्रणाली अपने आप में कई उद्देश्यों पर सीधे रूप से काम करती है साथ ही साथ विषयवस्तु एवं उद्देश्यों के बीच एक जैविक एकत्व को स्थापित करती है। कार्यप्रक्रिया का वृहद् स्वरूप जिसको कि यहाँ अपनाया गया है, प्राथमिक रूप से चिंतन और सीखने से सम्बन्धित प्रक्रिया के सिद्धांतों पर आधारित है, जहाँ व्यक्तिगत और सामूहिक चिंतन, दिए गए क्षेत्र और मुद्दों पर ज्ञान निर्माण का सबसे अहम तरीका है। इस प्रक्रियात्मक दृष्टिकोण के अन्तर्गत प्रतिभागी संरचनात्मक तरीके से मुद्दों से जूझते हुए, स्वयं के मान्यता तंत्र को चुनौती देते हुए, एक–दूसरे के सहयोग के साथ अपनी समझ को विकसित करते हुए प्रस्तावित काम के प्रति समझ और प्रासंगिकता के भाव को विकसित करते हैं। प्रौढ़ों के शिक्षाशास्त्र (andragogy) के सिद्धांतों को भी ध्यान में रखते हुए इस बात को भी उचित स्थान दिया गया है कि सैद्धांतिक एवं अभ्यास के वृहद् उद्देश्यों पर आम सहमति के साथ प्रासंगिकता स्थापित करते हुए प्रशिक्षण के मुख्य लक्ष्यों को पाने की ओर काम किया जाए।

दृष्टिकोण

प्रशिक्षण मॉड्यूल को बनाने के पीछे हमारा यह दृष्टिकोण रहा है कि प्रतिभागियों के व्यवहार, जानकारी, कौशलों और स्वभाव को उनकी भागादारी के आधार पर उनकी भूमिका को ध्यान में रखते हुए सकारात्मक प्रभावों में सुनिश्चित किया जाए।

हम यह कैसे करते हैं?

वृहद् लक्ष्यों को स्थापित कर के

हम प्रशिक्षण से क्या हाँसिल करना चाहते हैं?	दीर्घकालिक एवं लघुकालिक अवधि के लिए हमारे उद्देश्य कितने प्रसांगिक हैं?

⇩

प्रतिभागियों की आवश्यकता के अनुसार हमारे उद्देश्य कितने उचित हैं।

प्रतिभागियों की अपेक्षा और हमारे योजनाबद्ध उद्देश्यों में संतुलन बनाते हुए	यह सुनिश्चित करते हुए कि प्रशिक्षण योजना प्रतिभागियों की आवश्यकताओं और अपेक्षाओं को पूरा करते हुए लागू हो

⇩

योजना बनाना

वृहद् रणनीति की योजना बनाना	मूर्त रूप से दिवस–वार सत्रों का निर्माण

क्रियान्वयन

यह सुनिश्चित किया जाए कि योजना लचीली हो और ज़रूरतों के अनुरूप बदलाव के लिए बनी हो

कार्यान्वयन को सुधारने के लिए सामूहिक चिंतन के तरीके को इस्तेमाल किया जाए।

वैधता

संभागियों की प्रतिपुष्टि का इस्तेमाल करते हुए यह समझ बनाना कि अपेक्षित परिणाम मिले हैं या नहीं

कार्यप्रणाली

1. **सक्रिय रूप से सीखना –** प्रतिभागियों के अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर आगे समझ विकसित करने के लिए मदद करना।

2. **प्रशिक्षक एक सहायककर्ता (फैसिलिटेटर) के रूप में –** हम यह विश्वास रखते हैं कि सीखने और ज्ञान निर्माण प्रक्रिया की महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है कि सीखने वाला सीखने की जिम्मेदारी ले इसलिए हमने सत्रों को इस तरह नियोजित किया है कि सीखने वाला अपनी समझ बनाने में सक्रिय रूप से संलग्न रहे और प्रशिक्षक इस प्रक्रिया में एक फैसिलिटेटर के रूप में मदद करते हुए सभी सहभागियों की भागीदारी सुनिश्चित कर पाएँ। यानी पढ़ना, समूह चर्चा, प्रस्तुतीकरण, लिखित कार्य आदि के रूप में प्रशिक्षण की गतिविधियाँ गठित होती हैं जहाँ प्रशिक्षणार्थी स्वयं बहुत सी गतिविधियों द्वारा अर्थ निर्माण करते हैं।

3. **भागीदारी –** भागीदारी हमारे पास उपलब्ध संसाधनों में सबसे महत्त्वपूर्ण संसाधन है। इसलिए हम प्रतिभागियों की सक्रिय भागीदारी को प्रोत्साहित करें एवं सामूहिक रूप से सीखने–समझने की ओर बढ़ने की कोशिश करें। प्रतिभागियों को व्यक्तिगत सक्रिय निर्माताओं के रूप में ही नहीं परन्तु पूरे समूह के लिए एक संसाधन के रूप में देखना चाहिए जो कि अपने अनुभव और भागीदारी से एक बेहतर समझ बनाने में मदद कर सकते हैं।

4. **सुनिश्चित करना कि प्रतिभागी सीखने–समझने और भागीदारी के लिए उत्साहित महसूस करें –** उत्साह सीखने की प्रक्रिया में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है और हम यह विश्वास रखते हैं कि प्रतिभागियों को प्रशिक्षण में उत्साहित रखना बहुत ही आवश्यक है। इसके लिए फैसिलिटेटर का आचरण लोकतांत्रिक होना चाहिए और उसे यह सुनिश्चित करना चाहिए कि हर प्रतिभागी को लगे कि वह महत्त्वपूर्ण एवं मूल्यवान है। दूसरा, प्रतिभागियों द्वारा पूछे गऐ सवालों को सही भाव के साथ लेना और परस्पर आदर, सम्मान और सकारात्मक प्रतिपुष्टि से प्रशिक्षण का पूरा वातावरण सकारात्मक बनाना काफी आवश्यक है।

5. **फैसिलिटेटर द्वारा आदर्श व्यवहार –** हमारा यह मानना है कि प्रतिभागी फैसिलिटेटर की कार्यसंस्कृति, रवैये, व्यवहार और पूरी टीम के आचरण से जो उनके साथ काम कर रही है, काफी अंतर्दृष्टि प्राप्त करते हैं। तो हम यह विश्वास रखते हैं कि फैसिलिटेटर द्वारा अपने काम के लिए प्रतिबद्धता और संजीदगी रखना, कार्यों

में लोकतान्त्रिक तरीकों का अनुपालन करना और अपने काम में विश्वास रखने की ओर एक आदर्श व्यवहार दिखाना बहुत आवश्यक है।

6. **तकनीक का उपयोग –** विचारों के स्पष्ट एवं प्रभावी सम्प्रेषण के लिए तकनीक बहुत ही सशक्त माध्यम है। यह बहुत आवश्यक है कि तकनीक को प्रक्रिया के एक पहलू मात्र के रूप में ही देखा जाना चाहिए यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि वह प्रतिभागी और फैसिलिटेटर के बीच या प्रतिभागियों के बीच के जैविक संवाद पर भारी नहीं पड़े।

सत्र की प्रकृति एवं उपलब्ध सामग्रियों के अनुसार इस प्रक्रिया में अलग–अलग तरीकों का इस्तेमाल किया जा सकता है। उद्देश्यों की प्रकृति, सामग्री और प्रतिभागियों के समूह को देखते हुए ऊपर दिए गए सिद्धांतों के अनुसार फैसिलिटेटर द्वारा हमेशा कुछ ना कुछ लचीलेपन का प्रयोग किया जाना चाहिए। कुछ सामान्य तरीके जिन्हें सम्मिलित किया जा सकता है, निम्नलिखित हैं –

- **व्याख्यान**
- **प्रस्तुतीकरण**
- **उपसमूह एवं व्यक्तिगत कार्य**
- **सामूहिक चर्चाएँ**
- **रोल प्ले**
- **प्रतिपुष्टि एवं रिपोर्टिंग**
- **केस अध्ययन**
- **चयनित सामग्री का पठन**
- **डायरी लेखन**

प्रशिक्षण प्रक्रिया में सुसंगति, समीक्षा एवं सृजन के पक्षों का समावेशन

प्रशिक्षण के उपरोक्त आयामों पर कार्य होने के दौरान ही निरन्तरता में सुसंबद्धता, प्रतिपुष्टि, समीक्षा एवं सृजन की प्रक्रियाओं को संबोधित किया जाएगा। जैविक समावेशन के चार महत्त्वपूर्ण पक्ष निम्न होंगे –

1. विभिन्न विषयवस्तु/पक्षों के मध्य सुसंगति/संरेखीकरण स्थापित करना।
2. संभागियों की नियमित प्रतिपुष्टि के आधार प्रशिक्षण प्रक्रिया एवं विषयवस्तु में आवश्यक सुगठन करना।
3. दैनिक परिवीक्षण एवं समीक्षा के माध्यम से आगामी सत्रों की कार्ययोजनाओं में आवश्यक सटीक बदलाव करना।
4. संभागियों द्वारा परिप्रेक्ष्य एवं तकनीकी सत्रों में सम्पन्न हुए कार्य के आधार पर शिक्षक–प्रशिक्षण के प्रस्तावित मॉड्यूल में परिमार्जन करना (कार्यशाला सत्रों में)।

अ. संरेखीकरण (Alignment)

पाठ्यचर्या, शिक्षण विधा एवं मूल्यांकन के प्रमुख आयामों को एक सुसंगत समग्र के रूप में निर्मित करने की धुरी के रूप में संरेखीकरण का उपयोग किया गया है। इस प्रक्रिया द्वारा यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है कि विभिन्न पहलुओं पर बनी गहरी समझ के मध्य परस्पर सुसंगति का निर्माण किया जा सके।

विभिन्न सत्रों एवं उसके अन्तर्गत अपनाई जाने वाली कार्यप्रणाली मिलकर एक सम्पूर्ण दृष्टिकोण बनाती है और प्रशिक्षण के उद्देश्यों को समग्र रूप में सम्बोधित करती है। यहाँ इस बात पर ज़ोर देने की आवश्यकता है कि कार्यप्रणाली क्रियाविधिक सिद्धान्तों का एक ढाँचा है जो सत्रों को मूर्त स्वरूप देने की प्रक्रिया के केंद्र में रहते हैं, यह दृष्टिकोण उद्देश्यों को समग्र रूप से संबोधित करता एवं विषयवस्तु का प्रभावी सम्प्रेषण सुनिश्चित करता है।

ब. सतत प्रतिपुष्टि (Feedback)

पूरी प्रशिक्षण प्रक्रिया के अन्तर्गत सतत रूप से प्रतिपुष्टि प्राप्त करना बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इसके आधार पर प्रतिभागियों को एवं संदर्भ व्यक्तियों को प्रशिक्षण की प्रभावशीलता को बढ़ाने का मौका मिलता है। इस प्रशिक्षण के हर मुख्य चरण में प्रतिभागियों द्वारा स्व–आकलन करना एवं संदर्भ व्यक्तियों को प्रतिपुष्टि प्रदान करने की जिस प्रक्रिया को अपनाया गया है उसे निम्न चार चरणों के माध्यम से प्रदर्शित किया जा सकता है –

1. प्रशिक्षण के प्रारंभ में व्यक्त अपेक्षाओं के रूप में

↓

2. प्रत्येक दिन सभी प्रतिभागियों द्वारा व्यक्तिशः स्वआकलन एवं प्रतिपुष्टि देने के रूप में

↓

3. मौखिक एवं लिखित रूप से प्राप्त प्रतिपुष्टियों के आधार पर आगामी सत्रों की कार्ययोजनाओं में बदलाव हेतु दैनिक समीक्षा

↓

4. प्रशिक्षण के अंत में लिखित एवं मौखिक रूप में प्रतिभागियों द्वारा आकलन–प्रतिपुष्टि, जिसके आधार पर आगे होने वाले प्रशिक्षणों में अपेक्षित बदलाव किए जा सके।

स. शिक्षक प्रशिक्षण की तैयारी एवं मॉड्यूल निर्माण –

इस प्रशिक्षण के दौरान प्रतिभागी एक ओर जहाँ अपनी समझ को व्यवस्थित कर रहे होंगे वहीं दूसरी ओर शिक्षक प्रशिक्षण मॉड्यूल पर भी काम किया जाएगा। प्रशिक्षण की तैयारी एवं कौशलों से संबंधित सत्रों में प्रतिभागी शिक्षक–प्रशिक्षण मॉड्यूल पर सुझाव देंगे और उसे कैसे बेहतर बनाया जा सकता है इस पर छोटे–छोटे समूह में मिलकर कार्य करेंगे। इस प्रक्रिया के द्वारा शिक्षक–प्रशिक्षण मॉड्यूल को पहले से अधिक संदर्भित किया जा सकेगा तो वहीं के.आर.पी. साथियों को भी इसके साथ काम करने में अधिक सहजता होगी। इस कार्य से सभी प्रतिभागियों को पूरे मॉड्यूल को अच्छी तरह समझने का मौका भी मिलेगा और इसके द्वारा उनकी शिक्षक–प्रशिक्षण मॉड्यूल के प्रति रचनात्मक संलग्नता सुनिश्चित हो सकेगी।

5. संभागियों के लिए पठन सामग्री

1. आधार पठन सामग्री

प्रशिक्षण के सभी पक्षों एवं सत्रों के लिए पठन–सामग्री निर्मित की गई है। यह सामग्री संबंधित सत्रों में पठन एवं चर्चाओं के लिए आधार पत्रों के रूप में उपयोग की जाएगी। इस सामग्री को मॉड्यूल में उचित स्थान पर अनुलग्नकों के रूप में युक्त किया गया है।

2. अनुपूरक पठन सामग्री

स्कूली शिक्षा के प्रमुख राष्ट्रीय दस्तावेज़ों से चुने हुए अंश :

सभी बच्चों को समतुल्य प्रारंभिक शिक्षा प्रदान करने के सामाजिक दर्शन के प्रति हमारी संवैधानिक प्रतिबद्धता का दौर सन् 1949–50 से आरंभ हुआ है। स्वाधीन भारत में इस नीति के समग्र क्रियान्वयन हेतु सार्वजनिक विद्यालयों की विशाल व्यवस्था के माध्यम से अनवरत प्रयास जारी हैं। सार्वजनीनिकरण के राष्ट्रीय संकल्प के प्रति हमारी आस्था क्रमशः भारतीय संविधान (1949–50), राष्ट्रीय शिक्षा आयोगों (1953–54 एवं 1964–66), राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1968, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–1986, 86वाँ संविधान संशोधन–2002 एवं निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा अधिकार अधिनियम–2009 आदि में स्पष्टतः अभिव्यक्त होती रही है।

इस राष्ट्रीय मन्तव्य एवं लक्ष्य के शैक्षिक प्रारुप, संकल्पनाओं एवं उपागमों को गढ़ने के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एनसीईआरटी–नई दिल्ली) द्वारा अब तक चार पाठ्यचर्या–दस्तावेज़ों का सृजन किया जा चुका है; (1) दसवर्षीय स्कूल के लिए पाठ्यक्रम–1975; (2) प्रारम्भिक और माध्यमिक शिक्षा का राष्ट्रीय पाठ्यक्रम–1988; (3) विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2000; (4) राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005।

इन दस्तावेज़ों के द्वारा देश के समक्ष आधारभूत शिक्षा लक्ष्यों, सरोकारों, सिद्धान्तों, विधाओं, रणनीतियों, पाठ्यक्रमों एवं व्यवस्थाओं के सुविचारित कार्यप्रस्ताव प्रस्तुत किए गए हैं। ये दस्तावेज़ देशव्यापी स्तर पर शैक्षिक विचार–विमर्श, शिक्षा–विभागों, विद्यालयों, अधिकारियों और शिक्षकों के लिए मार्गदर्शक सिद्धान्तों एवं क्रियाविधिक सुझावों के मुख्य स्रोत रहे हैं।

हमने राष्ट्रीय नीति दस्तावेजों से, स्कूली शिक्षा के तीन आयामों : **(1) पाठ्यचर्या एवं पाठ्यक्रम (2) बच्चे, ज्ञान और सीखने–सिखाने की प्रक्रिया व (3) आकलन, मूल्यांकन एवं परीक्षा** आदि पर छः दशकों से प्रस्तुत किए जा रहे विश्लेषणों, समालोचनाओं और सुधार के व्यापक सुझावों को तीन पुस्तिकाओं के रूप में संकलित किया है।

संकलन शिक्षक साथियों के पठन के लिए महत्वपूर्ण सामग्री को सुलभ कराने की दृष्टि से प्रकाशित किया गया है। कोई भी पाठक इन पुस्तिकाओं को पढ़ने के बाद एक बात पर अवश्य सहमत होंगे कि जिन विचार और संकल्पनाओं को कुछ लोग 21वीं शताब्दि के दूसरे दशक में ''बाहर से थोपे जा रहे अनावश्यक हस्तक्षेपों'' की संज्ञा देते हैं, वे सबके सब 60–65 वर्षों से भारतीय शिक्षा जगत के आधिकारिक शैक्षिक–विमर्श के ''केन्द्रीय मुद्दे'' रहे हैं। वे सभी सुझाव जो हममें से कुछ एक को अपरिचित और अप्रासंगिक लगते हैं, आधी सदी के हमारे

राष्ट्रीय शैक्षिक चिन्तन एवं व्यवहार के महत्वपूर्ण निष्कर्ष और मूलभूत शिक्षा सुधार की तर्कयुक्त सुसंगत दिशाएँ और युक्तियाँ हैं।

इस संकलित सामग्री के अध्ययन से किसी भी पाठक को उल्लेखित भ्रांतिपूर्ण धारणाओं का स्पष्टीकरण सहज ही प्राप्त हो सकेगा। इस संकलन में निम्न राष्ट्रीय दस्तावेजों से **साभार** आवश्यक अंशों को चुना गया हैं।

साभार

1. भारतीय संविधान–भारत सरकार (मूल–1949 एवं संशोधित–2002)
2. राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (मुदालियार आयोग) : 1953–54 (भारत सरकार)
3. राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (कोठारी कमीशन) : 1964–66 (भारत सरकार)
4. राष्ट्रीय शिक्षा नीति : 1968 (भारत सरकार)
5. दसवर्षीय स्कूल के लिए पाठ्यक्रम : 1975 (एनसीईआरटी–नई दिल्ली)
6. राष्ट्रीय शिक्षा नीति : 1986 (भारत सरकार)
7. प्रारम्भिक और माध्यमिक शिक्षा का राष्ट्रीय पाठ्यक्रम : 1988 (एनसीईआरटी–नई दिल्ली)
8. यशपाल समिति रिपोर्ट : 1993 (एमएचआरडी–भारत सरकार)
9. शिक्षा की ओर पहला कदम : 1998 (एनसीईआरटी–नई दिल्ली)
10. विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2000 (एनसीईआरटी–नई दिल्ली)
11. 86वाँ संविधान संशोधन : 2002 (भारत सरकार)
12. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा : 2005 (एनसीईआरटी–नई दिल्ली)
13. आधार पत्र : 2008 (एनसीईआरटी–नई दिल्ली)
14. आकलन स्रोत पुस्तिका : 2009 (एनसीईआरटी–नई दिल्ली)
15. निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम : 2009 (भारत सरकार)

यह सामग्री केवल सीमित वितरण के लिए संकलित की गई है और इसे शिक्षकों के साथ संवाद हेतु गैर व्यावसायिक अकादमिक उद्देश्य के लिए ही प्रयोग किया जाए।

6 दिवसीय शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम

दिन	सत्र–1	सत्र–2	लंच	सत्र–3	सत्र–4
	9:30–11:15	11:30–1:15		2:15–3:45	4:00–5:30
1	रजिष्ट्रेशन सामग्री वितरण परिचय चेतना गीत उद्घाटन प्रशिक्षण से अपेक्षाएँ	प्रशिक्षण के बारें संक्षिप्त विवरण **परिप्रेक्ष्य सत्र–1** (भाग–1) वर्तमान शैक्षिक परिदृश्य एवं बच्चों की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का मूल अधिकार पर संवाद। द्वारा–विडियों / नोट	1:15 से 2:15	**तकनीकी सत्र–1** (विषय समूहों में) विषय की प्रकृति एवं सीखने की प्रक्रिया	**तकनीकी सत्र–2** (विषय समूहों में) पाठ्यक्रम एवं पाठ्यक्रमणीय उद्देश्य
2	चेतना गीत / बालगीत **परिप्रेक्ष्य सत्र–2** (भाग–1) गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, उपयुक्त पाठ्यक्रम एवं प्राथमिक शिक्षा की विधियाँ व बालकेन्द्रित शिक्षण पद्वति। द्वारा–विडियों / नोट	**तकनीकी सत्र–3** (विषय समूहों में–प्रथम विषय) शिक्षण की प्रमुख चुनौतियाँ एवं विषय में बालकेन्द्रित शिक्षण प्रक्रिया।		**तकनीकी सत्र–4** (विषय समूहों में) सीसीई स्कीम एव दस्तावेजों को समझना।	**तकनीकी सत्र–5** (विषय समूहों में) शिक्षण नियोजन एवं प्रक्रिया
3.	चेतना गीत / बालगीत **परिप्रेक्ष्य सत्र–3** (भाग–1) आकलन एवं मूल्यांकन की प्रक्रियाएँ एवं पाठ्यक्रम, शिक्षण एवं आकलन में संगतता। द्वारा–विडियों / नोट	**तकनीकी सत्र–6** (विषय समूहों में) विषय में सतत एवं व्यापक आकलन प्रक्रिया।		**तकनीकी सत्र–7** (विषय समूहों में) विषय में रचनात्मक एवं योगात्मक आकलन प्रक्रिया।	**तकनीकी सत्र–8** (विषय समूहों में) रचनात्मक एवं योगात्मक आकलन के लिए टूल एवं प्रपत्र निर्माण। प्रशिक्षण का फीडबैक लेना।

***नोट*– प्रशिक्षण के तीन दिन उपरान्त शिक्षक साथी समूह अनुसार अपने दूसरे विषय का प्रशिक्षण प्राप्त करेंगें। जिन विषयों के मध्य यह बदलाव किया जाना है वह हैं :– "अंग्रेजी⇆गणित" एवं "हिन्दी⇆पर्यावरण अध्ययन"।**

दिन	सत्र–1	सत्र–2	लंच	सत्र–3	सत्र–4
	9:30–11:15	**11:30–1:15**		**2:15–3:45**	**4:00–5:30**
4	चेतना गीत / बालगीत **परिप्रेक्ष्य सत्र–4** (भाग–2) विषयों में कला एवं संगीत का समावेश	**तकनीकी सत्र–9** (विषय समूहों में–द्वितीय विषय) विषय की प्रकृति एवं सीखने की प्रक्रिया।		**तकनीकी सत्र–10** (विषय समूहों में) पाठ्यक्रम एवं पाठ्यक्रमणीय उद्देश्य।	**तकनीकी सत्र–11** (विषय समूहों में) शिक्षण की प्रमुख चुनौतियाँ एवं विषय में बालकेन्द्रित शिक्षण प्रक्रिया।
5.	चेतना गीत / बालगीत **परिप्रेक्ष्य सत्र–5** (भाग–2) प्रारंभिक शिक्षा में बालिकाओं की शिक्षा एवं जेण्डर सम्बन्धित मुद्दों पर संवाद	**तकनीकी सत्र–12** (विषय समूहों में) शिक्षण नियोजन एवं प्रक्रिया	**1:15 से 2:15**	**तकनीकी सत्र–13** (विषय समूहों में) विषय में सीसीई प्रक्रिया को समझना।	**तकनीकी सत्र–14** (विषय समूहों में) विषय में रचनात्मक एवं योगात्मक आकलन प्रक्रिया।
6	चेतना गीत / बालगीत **परिप्रेक्ष्य सत्र–6** (भाग–2) दिव्यांग बच्चों के साथ काम करने की प्रक्रिया को समझना।	**तकनीकी सत्र–15** (विषय समूहों में) रचनात्मक एवं योगात्मक आकलन के लिए टूल एवं प्रपत्र निर्माण।		**तकनीकी सत्र–16** (विषय समूहों में) प्रशिक्षण में किये कार्य का पुनः सिंहावलाकन एवं सीसीपी व सीसीई पर शेष रहे कार्य को पूरा करना। प्रशिक्षण का विषय आधारित फीडबैक लेना।	सामूहिक सत्र प्रशिक्षण का समापन।

नोट : परिप्रेक्ष्य सत्रों का संचालन प्रशिक्षण शिविर की विशेष परिस्थिति के अनुसार किया जा सकता है। अर्थात् उन्हें या तो सामूहिक रूप से एक जगह, दो समूहों में अथवा चार विषयगत समूहों में सम्पन्न किया जा सकता है।

सामान्य सत्र–1 : प्रथम दिवस (11.15 से 12.15 बजे)

प्रशिक्षण पर एक दृष्टिपात (An Overview)

यह सत्र प्रशिक्षण के प्रारंभ में किया जाना है जिसके अंर्तगत प्रशिक्षण से संबंधित सभी प्रमुख पक्षों पर बातचीत की जाएगी। वयस्कों के सीखने–समझने की प्रक्रिया में पूर्व में लक्ष्यों, प्रक्रियाओं एवं अपेक्षाओं के प्रति स्पष्टता हो तो वे बेहतर रूप से सहभागिता निभाते हुए अधिक प्रगति कर पाते हैं। यहीं से इस सत्र के सबसे अहम लक्ष्य उभर कर आते हैं, जो इस प्रकार हैं –

- प्रशिक्षण के लक्ष्यों एवं प्रक्रियाओं की जानकारी होना।
- तय किये लक्ष्यों एवं प्रक्रियाओं के कारणों की स्पष्टता होना।
- प्रतिभागी के तौर पर किस तरह की अपेक्षाएँ हैं यह स्पष्ट होना।
- प्रशिक्षण किन परिणामों को लक्षित करते हुए दें इसकी समझ होना।
- लक्ष्यों एवं परिणामों के आधार पर कैसे प्रगति को देखा जाएगा इस पर स्पष्टता होना।

कुछ ऐसे लक्ष्य हैं जिन को इस सत्र के दौरान संबोधित किया जाएगा। इसके साथ ही कुछ महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ हैं जिन्हें सभी के साथ साझा किया जाएगा। इस भाग के अंर्तगत प्रशिक्षण के दिवसवार प्लान पर बातचीत की जानी है और किस दिन प्रमुख रूप से किन पक्षों पर काम किया जाएगा इससे सभी सहभागियों को अवगत करवाया जाएगा। इस ही प्रक्रिया में आगे बढ़ते हुए प्रशिक्षण के अंतर्गत दिनचर्या किस प्रकार रहेगी। इससे सभी संभागियों को ठीक से अवगत करवाया जाएगा और इसके उपरांत प्रशिक्षक समूह का एक प्रारंभिक परिचय भी करवाया जा सकता है।

इस सत्र का एक और लक्ष्य यह है कि प्रशिक्षण पर समझ बनाने के बाद सहभागियों के सुझाव भी ले लिए जाएँ और उपयोगी सुझावों के आधार पर जहाँ भी संभव हो बदलाव के प्रयत्न किये जाएँ।

इस प्रक्रिया को प्रभावी रूप से संचालित करने हेतु पीपीटी का उपयोग किया जा सकता है। यह सुनिश्चित करें कि प्रशिक्षण की सामग्री एवं दिवसवार दैनिक योजना सभी संभागियों के पास हो।

अनुलग्नक–1

प्रशिक्षण के उद्देश्य एवं परिणामों पर प्रस्तुतिकरण

प्रशिक्षण पर एक दृष्टिपात

स्टेट इनिशिएटिव फॉर क्वॉलिटि एज्यूकेशन

ऑवरव्यूव क्यों ?

- संभागी के रूप में यह पता होना चाहिए कि हमें किन–किन बिन्दुओं पर समझ बनानी है।
- हमें पता होना चाहिए कि प्रशिक्षण के दौरान किन–किन प्रक्रियाओं को अपनाया जाएगा।
- हमें पता होना चाहिए कि इन उद्देश्यों एवं प्रक्रियाओं का किन आधारों पर चयन किया गया है।
- हमें पता होना चाहिए कि यह कैसे सुनिश्चित किया जा सकता है कि हम सही दिशा में बढ़ रहे हैं या नहीं।
- हमें पता होना चाहिए कि प्रशिक्षण में हमसे क्या अपेक्षित है।

प्रशिक्षण के मुख्य उद्देश्य

इस प्रशिक्षण का मुख्य लक्ष्य शिक्षक प्रशिक्षणों तक सीमित नहीं है, अपितु एक प्रक्रिया की शुरुआत है जिसके प्रमुख लक्ष्य हैं :

- पाठ्यचर्या में दिए गए लक्ष्यों, बाल केन्द्रित शिक्षा एवं समग्र एवं सतत मूल्यांकन के मूल स्वरूप को जान सकें एवं इन तीनों पक्षों के संरेखीकरण/सुसंगति के महत्त्व को जान सकें।
- बच्चों द्वारा ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया एवं उसमें बच्चों की आयु एवं संदर्भ की भूमिका के महत्त्व को समझ पाएँ।
- एसआईक्यूई कार्यक्रम के अन्तर्गत उपयोग में लिए जाने वाले सभी प्रकार के दस्तावेजों एवं सामग्रियों के प्रयोग को समझ पाएँ।
- अपने विषय विशेष की प्रकृति एवं पाठ्यचर्या, शिक्षण विधा एवं आकलन की बारीकियों को जानें। साथ ही साथ उसके अन्तर्गत व्यवहारिक प्रक्रियाओं के महत्त्वपूर्ण चरणों के सम्बन्ध में स्पष्टता अर्जित कर सकें।
- व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से अपने–अपने विषय के अन्तर्गत प्रयुक्त सामग्रियों जैसे कि शिक्षण अधिगम सामग्री, कार्यपत्रक, शिक्षण अधिगम योजना एवं कक्षा–कक्षीय प्रक्रियाओं के प्रारूपों का निर्माण कर सकें जिन्हें विद्यालय स्तर पर अपनाया जा सकता है।

प्रशिक्षण के मुख्य आयाम

परिप्रेक्ष्य निर्माण	ज्ञान एवं समझ हेतु विमर्श	कौशल एवं अभ्यास
• सभी बच्चों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की सकारात्मक मनोवृत्ति एवं प्ररिप्रेक्ष्य निर्मित करना। • के.आर.पी. की भूमिका के संदर्भ में सकारात्मक भूमिका का निर्माण करना।	• एस.आई.क्यू.ई. कार्यक्रम के बारे में समझ विकसित करना। • पाठ्यचर्चा, शिक्षण एवं मूल्यांकन पर गहन समझ विकसित करना। • परम्परागत शिक्षण विधाओं के संदर्भ में आलोचनात्मक एवं समालोचनात्मक समीक्षा एवं नवाचार के औचित्य पर समझ विकसित करना। • दस्तावेजों की सम्पूर्ण समझ एवं शिक्षण प्रक्रिया के साथ इसके अन्तर्संबंध को समझना।	• आगामी शिक्षक प्रशिक्षण के संदर्भ में एक सक्षम के.आर.पी. की भूमिका के निर्वहन पर समझ विकसित करना। • प्रभावी प्रशिक्षण के लिए प्रक्रियाओं एवं तरीकों पर समझ विकसित करना। • बेहतर प्रशिक्षक बनने के लिए जागरूकता एवं आवश्यक प्रशिक्षक कौशलों का निर्माण करना।

सत्रों के तीन मुख्य प्रकार

1. **संवाद सत्र –** परिप्रेक्ष्य एवं दृष्टिकोण संबंधित सैद्धांतिक एवं ऐतिहासिक मुद्दों पर विमर्श करना।
2. **तकनीकी सत्र –** ज्ञान एवं समझ का विकास : विषय के संदर्भ में कक्षा–कक्षीय अभ्यास आधारित।
3. **कार्यशाला सत्र –** कौशल एवं अभ्यास : स्वयं को व्यवस्थित करना एवं कक्षा–कक्षीय प्रक्रियाओं के सन्दर्भ में कौशल विकास व अभ्यास।

कार्यविधि : मुख्य पहलू : क्या और क्यों?

- प्रतिभागी बड़े समूह में अपने विचारों, मान्यताओं एवं धारणाओं को व्यक्त कर सकें।
- समूह सामूहिक रूप से विभिन्न विचारों एवं दृष्टिकोणों को समझ पाएँगे।
- संभागी तथ्य एवं तर्क के आधार पर चर्चा में संलग्न हो पाएँगे एवं न्यायसंगत दृष्टिकोण पर पहुँच पाएँगे।
- नवाचारों से संबंधित अवधारणाओं को समझ पाएँगे एवं व्यक्त कर पाएँगे।
- विषयों के संदर्भ में उनकी प्रकृति अध्यापन प्रक्रिया एवं आकलन प्रक्रिया को नवाचार के प्ररिप्रेक्ष्य में समझ पाएँगे।
- सामूहिक कार्यों एवं योजनाओं के माध्यम से टीम का निर्माण कर पाएँगे।

प्रशिक्षण सारणी

प्रशिक्षण के लिए विचारणीय मुख्य क्षेत्र :

◦ गुणवत्तापूर्ण शिक्षा समस्त बच्चों का अधिकार।

- गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की धारणा पर संवाद। (समग्र एवं विषयविशेष)
- पाठ्यक्रम के उद्देश्य, सीखने–सिखाने की बालकेन्द्रित प्रक्रिया एवं मूल्यांकन से संबंधित मुद्दों पर संवाद। (समग्र एवं विषयविशेष)
- बाल केन्द्रित शिक्षण विधाओं के क्रियान्वयन हेतु कौशल विकास एवं अभ्यास।

Day – 1st : प्रशिक्षण के स्वरूप एवं लक्ष्यों को समझना तथा समतुल्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के अधिकार पर संवाद। विषय सत्र–1 आरम्भ

Day 2nd to 3rd : परिप्रेक्ष्य सम्बन्धी संवाद सत्र व विषय–1 में पाठ्यक्रम, शिक्षणशास्त्र एवं मूल्यांकन के परिप्रेक्ष्य में समझ बनाना।

Day 3rd to 6th : परिप्रेक्ष्य सम्बन्धी संवाद सत्र (भाग–2) में पाठ्यक्रम, शिक्षणशास्त्र एवं मूल्यांकन के परिप्रेक्ष्य में समझ बनाना।

संवाद के माध्यम से परिप्रेक्ष्य निर्माण	सुबह का सत्र प्रातः 11 : 30 तक
कक्षा–कक्षीय समझ एवं अभ्यास	अपराह्न सत्र
स्वसंगठन एवं शिक्षण के लिए कार्यशाला	संध्या सत्र

प्रगति एवं परिणामों का आकलन

- **प्रशिक्षण के दौरान सतत् आकलन कि हम क्या सीख रहे हैं एवं कहाँ सुधार करने की आवश्यकता है।**
- **कैसे :–**
  - पूर्व प्रशिक्षण प्रतिपुष्टि एवं आत्म मूल्यांकन।
  - परिणामों की जाँच करना।
  - प्रतिभागियों से सत्रवार एवं समग्र प्रतिक्रिया।
  - सत्रवार अवलोकन एवं प्रलेखन।
  - प्रतिभागियों द्वारा विकसित असाइनमेन्ट।
  - प्रशिक्षण के दौरान प्रतिभागियों के लिए आत्म–मूल्यांकन सूची।

- प्रशिक्षण की व्यापक समीक्षा के लिए सभी सूचना स्रोतों से सूचनाओं का संग्रहण।

सामग्री

- शिक्षक प्रशिक्षण मॉड्यूल।
- पठन सामग्री (सैद्धांतिक एवं विषय विशिष्ट)
- टी.एल.एम. एवं गतिविधि सूचियाँ
- ऑडियो एवं वीडियो सामग्री
- उपयोगी वैब लिंक की सूची।

हमारी अपेक्षाएँ

- पहल एवं कार्यों का नेतृत्त्व
- समस्त सामग्री का पठन सुनिश्चित हो।
- समस्त शंकाओं का समाधान सुनिश्चित हो।
- सत्रों का संचालन उद्देश्यों के अनुसार सुनिश्चित हो।
- प्रशिक्षण के दौरान समझने की प्रक्रिया में दूसरों के लिए सकारात्मक सुदृढ़ीकरण प्रदान करना।
- सत्र संचालक को अपनी समस्त शंकाओं तों, प्रश्नों एवं सुझावों से अवगत कराएँ।
- सत्रों का संचालन समय सारणी के अनुसार होने में मदद करें।

भाग–2

परिप्रेक्ष्य विकास सत्र

(प्रथम)

परिप्रेक्ष्य विकास सत्रों का अनुक्रम

खण्ड–अ

भूमिका : परिप्रेक्ष्य विकास सत्र की अवधारणा एवं सामान्य प्रक्रिया : क्या, क्यों और कैसे ?

सत्र–1 : 'शिक्षा के अधिकार' के विचार' के विकास की ऐतिहासिक प्रक्रिया एवं 'समतुल्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के सार्वभौमीकरण' को इस संकल्पना की मूल प्रस्थापना के रूप में समझना है।

सत्र–2 : 'गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की अवधारणा' की व्यापक समझ। वर्तमान शैक्षिक परिदृश्य में इसे सारतः मूर्त रूप देने की आवश्यकता, संभावनाओं, सीमाओं एवं चुनौतियों पर विचार–विमर्श कर स्पष्टता विकसित करना।

सत्र–3 : सीखने सिखाने की प्रभावशीलता, समग्रता, उपयुक्तता एवं सार्थक परिणिति के लिए ''अधिगम एवं विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षा शास्त्र'' के उपागम का समालोचनात्मक विवरण, विश्लेषण एवं आकलन।

सत्र–4 : परीक्षा, आकलन एवं मूल्यांकन का शिक्षा प्रणाली एवं अधिगम प्रक्रिया से सम्बंध। वर्तमान स्थिति की समालोचनात्मक समीक्षा। सतत रचनात्मक आकलन के उपागम को शैक्षिक उन्नयन की रणनीति एवं सीखने–सिखाने की प्रक्रिया के अंश के रूप में समझना।

खण्ड–ब

सत्र–5 : प्राथमिक शिक्षा में कला, कार्य एवं सौंदर्यबोध शिक्षण का महत्त्व। कला शिक्षण के मायने एवं विधि के मुख्य सिद्धान्त। विविध कला विधाओं, माध्यमों एवं अनुभवों का विषय शिक्षण के साथ इन्टीग्रेशन का विचार।

सत्र–6 : समावेशित शिक्षा : विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान, कक्षा–कक्षीय प्रक्रियाओं में समावेशन।

सत्र–7 : जेण्डर संवेदनशीलता का अर्थ एवं सरोकार/लैंगिक समानता के विचार एवं व्यवहार के शिक्षण में परिवार, शिक्षक, विद्यालय व समुदाय की भूमिका।

परिप्रेक्ष्य विकास सत्र की अवधारणा एवं सामान्य प्रक्रिया– क्या, क्यों और कैसे?

संवाद सत्र–एक परिचय

एसआईक्यूई कार्यक्रम के दूरगामी लक्ष्यों एवं केआरपी की भूमिकाओं को ध्यान में रखा जाए तो यह बात स्पष्ट रूप से उभर कर आती है कि प्रस्तावित संवाद सत्रों की एक बहुत ही अहम् भूमिका है। एसआईक्यूई कार्यक्रम, प्राथमिक कक्षाओं में जहाँ एक ओर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के मुद्दे को प्रमुख रूप से संबोधित करता है वहीं उसका मुख्य सरोकार गुणवत्ता की समतुल्यता को सभी बच्चों के लिए सुनिश्चित करना भी है। इससे यह स्पष्ट होता है कि इस कार्यक्रम के अंतर्गत अकादमिक भूमिका निभाने हेतु गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, उसके अहम् घटकों तथा उसके सार्वजनीकरण का इतिहास, चुनौतियाँ एवं सामाजिक संदर्भों पर स्पष्ट समझ एवं दृष्टिकोण का होना अनिवार्य है। संवाद–सत्रों की परिकल्पना इन्हीं विषयों को ध्यान में रखते हुए की गई है। यह बात उल्लेखनीय है कि इन सत्रों के माध्यम से जैसे–जैसे संभागियों के दृष्टिकोण में परिवर्तन आता–जाता है वैसे–वैसे ही प्रशिक्षण में उनकी सहभागिता, अपनी भूमिका के प्रति जागरूकता एवं नवाचारों के प्रति खुलापन भी आता है। परिणामतः इससे एक स्वस्थ संवाद एवं मिलकर सीखने–समझने की संस्कृति को भी बल मिलेगा।

संवाद सत्रों को जिस प्रकार नियोजित किया गया है, वे आने वाले तकनीकी सत्रों के लिए वैचारिक आधार भी प्रदान करते हैं। इस प्रक्रिया के चलते संभागी तकनीकी सत्रों में गहरी समझ बनाने की ओर अग्रसर होते हैं एवं रचनात्मक रूप से अधिक सक्रिय हो जाते हैं। इस तरह संवाद–सत्रों की भूमिका बहुत ही महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इनसे वर्षों से एकत्रित नवाचारों के प्रति जो निराशा के भाव हैं, उन्हें हटाते हुए मूलभूत मुद्दों पर स्पष्ट समझ की ओर बढ़ने में मदद मिलती है। इन सत्रों की सबसे अहम् भूमिका यह है कि इनके द्वारा संभागी शिक्षा से संबंधित मूल मुद्दों पर व्यवस्थित चिंतन की ओर अग्रसर होते हैं और जब वह उनके वृहद लक्ष्यों एवं चुनौतियों के सही स्वरूप को समझते हैं तो उन्हें स्वयं की भूमिका की अहमियत का भी आभास होता है।

अगर इन सत्रों को प्रभावी रूप से संचलित किया जाए तो संभागियों की सोच में महत्त्वपूर्ण एवं सकारात्मक बदलाव लाए जा सकते हैं। यहाँ पर एक और बात, जिसकी गंभीरता को समझना ज़रूरी है वह यह है, कि शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत साथियों तक, सहज, सार्थक एवं मूल सरोकारों को सामने रखते हुए तर्क पूर्ण रूप से संवाद को पहुँचाया ही नहीं गया है। यह संवाद–सत्र इस ओर एक प्रयास है व आशा है कि इनके परिणाम सार्थक रहे हैं। इन सत्रों को प्रभावी रूप से क्रियान्वित करने की कुंजी, सत्रों की पूर्व–तैयारी एवं उनका प्रक्रियात्मक पक्ष है। इन सत्रों की पूर्व–तैयारी इस कारण महत्त्वपूर्ण है क्योंकि ये सत्र केवल संवाद पर आधारित हैं एवं इसी वजह से जिन भी पक्षों या मुद्दों पर सत्र लिया जा रहा है उनकी स्पष्टता

संवाद–सत्रों का प्रक्रियात्मक स्वरूप :

संवाद सत्र– इन सत्रों का केंद्रबिन्दु है कि प्रतिभागी अपने विचारों एवं धारणाओं पर समालोचनात्मक चिंतन कर पाएँ और नए परिप्रेक्ष्य के संदर्भ में अपने इन मतों को विमर्श के माध्यम से सार्थक स्वरूप दे पाएँ। सत्र चर्चा और चिंतन पर आधारित होगा। यहाँ महत्त्वपूर्ण कार्य, व्याप्त धारणाओं, व्यवहार एवं मान्यताओं के सन्दर्भ में नई समझ के विकास की ओर बढ़ना है। अपने ही विचारों, धारणाओं, मान्यताओं एवं अभ्यासों को नवीन दृष्टिकोण से समझते हुए पुनरावलोकित करना इन सत्रों का प्रमुख लक्ष्य है। सार्थक संवाद एवं परिचर्चा द्वारा समझ बनाते हुए दृष्टिकोण में बदलाव आगे के सभी पक्षों को प्रभावित करता है।

होना एवं विभिन्न संदर्भों में अपनी बात को रख पाने के कौशल की ज़रूरत होती है। इस हेतु प्रशिक्षक दिए गए सत्र से संबंधित वीडियो को ध्यान से देखें और पठन सामग्री को भी ठीक से पढ़ें। संबंधित सामग्री के अध्ययन के उपरांत निम्न बिन्दुओं पर स्पष्टता बना लें–

अ. वह कौन–कौन से मुख्य बिन्दु या विचार हैं जिन्हें आप संभागियों तक पहुँचाना चाहते हैं।

ब. क्या आप सभी बिन्दुओं एवं विचारों के आधारों के प्रति पूर्णरूप से स्पष्ट हैं ? अगर नहीं तो कहाँ–कहाँ और स्पष्टता की जरूरत है ?

स. मुख्य विचारों पर किन–किन संदर्भों के तहत किस प्रकार के प्रश्न आ सकते हैं ? उनके जवाब किस प्रकार दिए जा सकते हैं ?

द. आप किस प्रकार इस सत्र को और अधिक प्रभावी एवं रोचक बना सकते हैं?

इन सत्रों को मुख्यतः तीन प्रक्रियाओं के आधार पर या तीनों विधाओं के प्रभावी तालमेल द्वारा संचालित किया जा सकता है। तीनों प्रक्रियाओं से संबंधित सामग्री इस मॉडयूल की विषय वस्तु परंतु प्रशिक्षक एवं संभागियों के समूह के आधार पर आप खुद यह निर्णय लें कि इन सत्रों को कैसे संचालित किया जाना है। ये तीन प्रक्रियाएँ निम्न प्रकार है।

अ. संवाद **ब. वीडियो आधारित संवाद** **स. पठन सामग्री पर आधारित संवाद**

जैसा कि पहले कहा गया है कि आप इन तीनों विधाओं या इनके किसी भी प्रकार के मिश्रण को संगठित करते हुए सत्र को संचालित कर सकते हैं। इनको और प्रभावी बनाने हेतु आप इनमें कुछ अन्य गतिविधियों को जोड़ सकते हैं, जैसे कि कोई खेल, उपसमूह कार्य एवं प्रस्तुतीकरण इत्यादि।

इन सत्रों के संबंध में सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि सभी संभागियों को उसकी प्रासंगिकता महसूस हो एवं वे इन सत्रों के माध्यम से सही मायनों में अपनी समझ को आगे बढ़ा सकें। संवाद एवं ज्ञान–निर्माण के कुछ अहम् बिन्दुओं पर आधारित कुछ प्रक्रियात्मक पहलुओं को सत्रों के संचालन में सम्मिलित करें। प्रस्तावित प्रक्रिया की रूपरेखा कुछ इस प्रकार है –

संवाद सत्र में विमर्श के प्रमुख चरण –

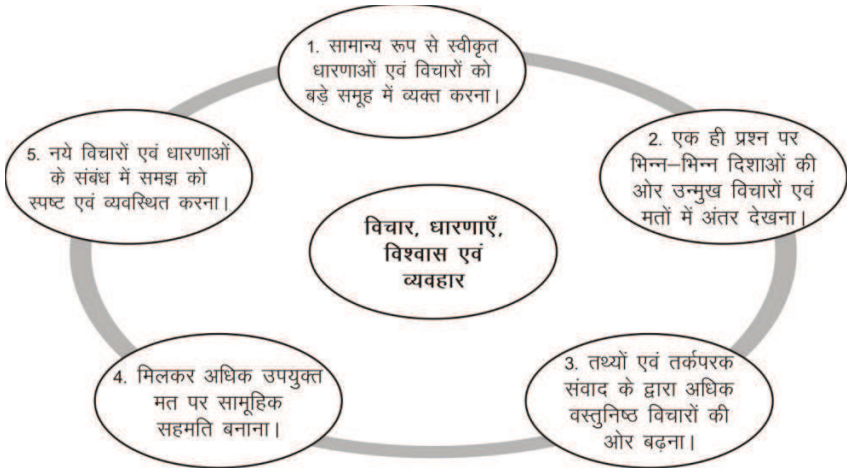

सत्रों का प्रक्रियात्मक स्वरूप

जिन भी मुद्दों पर बात की जानी है उनकी प्रासंगिकता को स्थापित करना और इस बात को स्पष्ट करना कि जिन बिन्दुओं पर बात की जानी है वे क्यों ज़रूरी हैं?

दिए गए मुद्दों पर सामान्य धारणाओं एवं मान्यताओं को स्पष्ट रूप से रखना एवं इस प्रक्रिया में सहभागियों को अपनी बात कहने एवं प्रश्न उठाने का मौका देना।

इस प्रारंभिक संवाद से यह उभर कर आएगा कि जिन भी विषयों पर समझ निर्माण का कार्य किया जाना है उन विषयों पर समूह के क्या विचार हैं ? यहीं से संवाद एवं चिंतन की सघन प्रक्रिया का आंरभ होता है जहाँ व्यवस्थित रूप से प्रमुख प्रचलित मान्यताओं को, जो उभर कर आई हैं, समझा जा सकता है।

प्रस्तावित विचारों के विवेचन द्वारा मूल सरोकारों एवं मुद्दे पर स्पष्टता लाएँ और यह देखने में संभागियों की मदद करें कि क्या हमें मूल सरोकारों को ध्यान में रखते हुए अपनी मान्यताओं का पुनरावलोकन करने की आवश्यकता है।

पुनरावलोकन की आवश्यकता को उभारने के बाद विमर्श के आधार के रूप में कुछ प्रमुख सरोकारों एवं मापदण्डों को उभारना एवं चिंतन प्रक्रिया के आधार के रूप में स्थापित करना।

दिए गए मुद्दों पर व्यवस्थित एवं सहज रूप से अपनी बात को रखना और इसको सुनिश्चित करना कि संवाद द्वारा 'निष्कर्षित स्वरूप' में संभागियों द्वारा इंगित सभी मुख्य सरोकारों को सम्मिलित किया गया है।

निष्कर्षित स्वरूप के विभिन्न आयामों को व्यवस्थित रूप से समझने हेतु संभागियों के सामने रखना एवं यह दिखा पाना किस प्रकार प्रत्येक आयाम कुछ मुख्य सरोकरों को संबोधित करते हैं।

अन्ततः इससे मुद्दों पर स्पष्टता बनाना। प्रस्तावित विवादों को सरोकारों के आधार पर पुनरावलोकित कर, उद्देश्यों एवं सामाजिक सरोकरों के सन्दर्भ में अपनी भूमिका को समझना।

इस प्रक्रिया में खुलापन बनाए रखना सबसे महत्त्वपूर्ण है एवं सबसे अहम् यह है कि संभागी अपनी मान्यताओं पर समालोचनात्मक रूप से चिंतन करें और इस बात को समझें कि प्रस्तावित विकल्पों की सार्थकता या निरर्थकता पर मान्यता बनाने से पहले उनके आधारों एवं सभी संबंधित पक्षों पर समग्र समझ बनाने की आवश्यकता है।

परिप्रेक्ष्य विकास सत्र–1 शिक्षा का अधिकार

सत्र के उद्देश्य :

- प्रतिभागी शिक्षा के अधिकार को एक मौलिक अधिकार के रूप में स्थापित करने के मायने समझ पाएँ एवं इसके विकास और वास्तविक स्वरूप तक की मूल यात्रा को समझ पाएँ।
- शिक्षक अपनी सामाजिक भूमिका के ऐतिहासिक संदर्भ को देख पाएँ एवं उसके महत्त्व को समझ पाएँ।
- आरटीई कानून को वास्तविक सामाजिक सन्दर्भ में समझ पाएँ।

विधा : चर्चा – संभागियों को इस विषय में खुलकर किन्तु संक्षेप में अपने विचार व्यक्त करने हेतु आमंत्रित करें।

चर्चा में आप, दिए गए वीडियो, अनुलग्नक–1 के नोट एवं नीचे दिए गए बिन्दुओं का प्रयोग कर सकते हैं –

- जब से मनुष्यों के समाज में औपचारिक विद्यालयों के द्वारा शिक्षा और विकास की संभावनाएँ उत्पन्न हुई हैं, तभी से एक मूल राजनैतिक प्रश्न यह रहा है कि औपचारिक शिक्षा का अधिकार किन्हें मिलना चाहिए?

<u>इतिहास</u>

दुनिया में हजारों वर्षों तक शिक्षा कुलीन वर्ग का विशेषाधिकार रहा है एवं आमजन के लिए निषेध

↓

18वीं से 20वीं शताब्दी में इस पर विश्व भर में गम्भीर प्रश्न उठे।

↓

भारत में सर्वप्रभम इसकी अभिव्यक्ति गोखले बिल के रूप में अंग्रेज सरकार के सामने रखी गई जहाँ सभी बच्चों के लिए निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा सरकार द्वारा सुनिश्चित की जाने की माँग की गई।

↓

स्वतंत्र भारत में संविधान बनने की बहस में इसे मूल अधिकार माने जाने की माँग रखी गई पर इसे अन्ततः नीति निर्देशक तत्वों के रूप में ही रखा गया। (भारत का संविधान 1449–50 अनुच्छेद–45)

↓

पिछले दो–तीन दशकों में वैश्विक स्तर पर यह माँग की जा रही है कि एक जनतांत्रिक, समृद्ध समाजों एवं राष्ट्रों को बच्चों की स्कूली शिक्षा में गैर बराबरी व अन्याय संगत व्यवस्था को बदलने की आवश्यकता है व राज्य तथा सरकार को सभी बच्चों की प्रगति सुनिश्चित करने का दायित्व लेना चाहिए।

↓

1992 में एक याचिका पर निर्णय करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने यह कहा कि शिक्षा के अधिकार को जीने के मूल अधिकार के तहत ही देखा जाना चाहिए। 2002 में संविधान में 86वें संशोधन में अनुच्छेद 21A जोड़ा गया जिसमें 6–14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने का मूल अधिकार मिला।

↓

इस मूल अधिकार के क्रियान्वयन हेतु हमारी संसद द्वारा सर्वसम्मति से सन्–2009 में आरटीई–एक्ट को पारित किया गया।

हमारे सार्वजनिक विद्यालयों में आने वाले अधिकांश बच्चे, वे बच्चे हैं जिनके परिवारों/समुदायों को पीढ़ियों से शिक्षा के अधिकार से वंचित रखा गया है। यह एक यथार्थ है कि आप शिक्षक वर्ग, उन विद्यालयों के संवाहक हैं जो उन बच्चों के साथ न्याय करने का आशय निर्मित कर रहे हैं जिन जैसों के साथ सैकड़ों वर्षों से अन्याय होता आ है। सरकारी स्कूल में आने वाले अधिकतर बच्चे वे बच्चे हैं जो पूर्णता असमर्थित हैं तथा जिनके स्कूल आने और सीखने के मार्ग में बहुत सी सामाजिक, आर्थिक अथवा सांस्कृतिक बाधाएँ हैं। ऐसी स्थिति में हमारे होने का महत्त्व तभी है जब हम उनके साथ समतापूर्ण रूप से न्याय कर सकें। इन बच्चों को समतुल्य गुणवत्ता की प्रारंभिक शिक्षा में सफल करने का अर्थ होगा देश और समाज में ''शैक्षिक न्याय व समानता'' तथा ''शिक्षा–लोकतंत्र'' की स्थापना करना। यह शिक्षकों एवं विद्यालयों की बहुत बड़ी जिम्मेदारी, गहरी संवेदनशीलता, पक्के संकल्प और गंभीर प्रयासों से हल होने वाला ऐतिहासिक कार्यभार है।

समेकन : पिछले कुछ वर्षों से शिक्षक वर्ग सबसे बड़े सामाजिक–राजनैतिक कार्यकर्ता के रूप में उभरे हैं। समाज में नागरिकों को प्राप्त होने वाले अवसर और अधिकारों की क्या स्थिति होनी चाहिए वह इसका संशोधन कर रहे हैं। हमें स्वयं को तथा अपने विद्यालयों को समझने और उनसे की जाने वाली अपेक्षाओं को समझने की ज़रुरत है।

सन्दर्भ –

जब से मनुष्यों के समाज में ऐसा विचार सामने आया कि मनुष्यों की अगली पीढ़ी को शिक्षित करने के लिए परिवार एवं समुदायों के अतिरिक्त कोई औपचारिक संस्था बनाई जाए तब से मनुष्यों के समाज में औपचारिक विद्यालयों के द्वारा शिक्षा और विकास की संभावनाएँ उत्पन्न हुई। विद्यालयों या औपचारिक शिक्षा के इतिहास के आरंभ से ही यह प्रश्न उठा कि औपचारिक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार किसको होना चाहिए और किसको नहीं। यानि शिक्षा के सार्वजनीनिकरण का विचार जितना सहज महसूस होता है, ऐतिहासिक दृष्टि से देखने से यह समझा जा सकता है कि यह विचार इतनी सहजता से उत्पन्न नहीं हुआ।

शिक्षा के अधिकार का इतिहास – कुछ विचारणीय पक्ष

जैसे ही विद्यालय इस रूप में व्यवस्थित हो पाएँ कि वे अपनी भावी पीढ़ी के बच्चों की क्षमताओं, योग्यताओं और कौशलों का निर्माण कर उनके भविष्य में लाभकारी परिणामों का निर्माण कर सकें, वहीं से हमारे समाज ने राजनैतिक रूप से यह निर्णय लिया कि औपचारिक शिक्षा प्राप्त करना केवल कुलीन वर्ग का विशेषाधिकार है और यह कुलीन वर्ग, काल और देश के हिसाब से अपने–अपने ढंग से परिभाषित हुए, बने और बदले। प्रत्येक समाज ने अपनी–अपनी परिभाषाओं के हिसाब से गैर कुलीन वर्ग को इस विशेषाधिकार से वंचित रखा और यह माना कि औपचारिक शिक्षा किसी मनुष्य का जन्मजात अधिकार नहीं है अपितु यह कुछ चुने हुए सामाजिक वर्गों, मेहनतकश लोगों एवं महिलाओं के लिए निषेध है। औपचारिक शिक्षा का यह इतिहास लगभग समस्त मनुष्यों के समाज में समान था। यह अचम्भे की बात नहीं बल्कि एक यथार्थ है कि जिस स्कूली व्यवस्था के आज हम शिक्षक है उस व्यवस्था का सर्वाधिक बड़ा काल इस ही राजनैतिक दृष्टिकोण से संचालित हुआ है।

सैकड़ों वर्षों के बाद लगभग 17वीं, 18वीं और प्रमुख रूप से 19वीं और 20वीं शताब्दी के आस–पास जैसे–जैसे हमारी चेतना गैरबराबरी, असमानता को न्याय संगत ठहराने पर प्रश्न चिह्न लगाने लगी वहीं से यह प्रश्न भी खड़ा हुआ कि क्या बच्चों की शिक्षा किसी वर्ग विशेष का अधिकार होना चाहिए? और इसकी सर्वाधिक प्रभावशाली अभिव्यक्ति दुनिया भर में अन्यायसंगत सामन्ती एवं औपनिवेशिक व्यवस्थाओं के विरुद्ध और सामाजिक न्याय एवं राष्ट्रीय स्वतंत्रता के आन्दोलनों के द्वारा 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हुई। आज से लगभग सौ साल पहले सैकड़ों वर्षों से चली आ रही असमानता के विरोध में अंग्रेजी सरकार के सामने गोखले बिल (1911) के नाम से यह विचार रखा गया कि हमारे देश के सभी बालकों के लिए निशुल्क एवं आनिवार्य शिक्षा सरकार के द्वारा लागू की जानी चाहिए। बाद में राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा यह कहा गया कि यदि भारत स्वतंत्र हुआ तो देश के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा का प्रबंध किया जायेगा। परन्तु जब हम स्वतंत्र हुए और संविधान बनाने पर बहस हुई तब हमने करवट बदली और कहा कि शिक्षा के अधिकार को मूल अधिकार और राज्य का दायित्व ना मान कर नीति निर्देशक तत्वों के रूप में देखा जाएगा तथा राज्य सभी बच्चों की शिक्षा व्यवस्था सुनश्चित करने का प्रयास करेंगे।

इसके परिणामस्वरूप स्वतंत्रता के बाद बड़ी तादाद में स्कूल खोले गए और यह बात राजनैतिक रूप से स्वीकार की गई कि शिक्षा का अधिकार विशेषाधिकार ना हो कर सभी का अधिकार है। तथा स्कूल बच्चे की पृष्ठभूमि के आधार पर किसी भी बच्चे को स्कूल में प्रवेश और औपचारिक शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार से वंचित नहीं रख

सकते। बड़ी संख्या में नए विद्यालयों की स्थापना एवं शिक्षकों की भर्ती और औपचारिक एवं संवैधानिक रूप से सब को शिक्षा का समान अधिकार होने के बावजूद स्थिति में अपेक्षाकृत परिवर्तन नहीं हुआ। शिक्षा के इतिहास में इतने प्रमुख बदलाव के बाद भी लगभग आधे से अधिक बच्चों का स्कूल में नामांकन नहीं हो पाया। इन सब में बच्चों की सामाजिक, आर्थिक पृष्ठभूमि से सम्बन्धित कारक इतने प्रभावी रहे की बच्चों का विद्यालयों से वास्तविक जुड़ाव नहीं हो पाया। यहाँ गौरतलब यह है कि 'शिक्षा के विशेषाधिकार' से 'अवसरों की समानता' तक के सफर में तमाम परिवर्तनों के बावजूद एक बात नहीं बदल रही थी कि बच्चों को शिक्षित करने और स्कूल में आने/भेजने का मूल दायित्व बच्चे तथा उसके परिवार का है। 'अवसरों की समानता' के काल में अध्यापकों तथा स्कूलों को इस दायित्व से मुक्त रखा गया। उनका दायित्व सिर्फ सभी बच्चों को बिना किसी भेदभाव के स्कूल में प्रवेश देने और पढ़ाने तक ही सीमित रखा गया।

पिछले कुछ दशकों में बहुत सारी सामजिक, आर्थिक एवं भौतिक उन्नति के साथ–साथ मनुष्यों के विचारों में भी तीव्रता से पूर्व में व्याप्त स्थितियों के प्रति युगांतकारी खलबली हो रही है। और यह परिवर्तन मात्र हमारे प्रदेश अथवा देश में ही नहीं बल्कि समूची मानवजाति और देशों में हो रहे हैं। जिसके परिणामस्वरूप हम हजारों वर्षो से व्याप्त स्थिति से बहुत तीव्रता से बाहर निकल रहे हैं।

शिक्षा के सार्वजनीनिकरण के प्रश्न का वास्तविक स्परूप –

एक समृद्ध जनतांत्रिक समाज एवं 21वीं शताब्दी में अग्रसर मानवजाति की संस्कृति और चेतना के रूप में हमारे सामने यह प्रश्न उठने लगे कि क्या यह समाज इस स्थिति को स्वीकार करता है कि उसके आधे से अधिक बच्चे औपचारिक एवं स्कूली शिक्षा तथा उससे होने वाले विकास से वंचित रहें। लगभग आधे बच्चों के माता–पिता अपनी विभिन्न समाजिक, आर्थिक एवं अन्य परिस्थितियों के कारण बच्चों की शिक्षा के विषय में सोचने समझने एवं प्रयास करने में असक्षम हैं। क्या यह स्थिति व्यक्तिगत है? या फिर यह सामाजिक एवं राजनैतिक व्यवस्था का परिणाम है। यह प्रश्न विचारणीय है कि जिस देश के लगभग आधे बच्चे स्कूली शिक्षा से वंचित हैं, वह देश कैसे न्यायपूर्ण एवं समृद्धिमय भविष्य की कल्पना कर रहा है। मानवजाति की यह कितनी असंगत स्थिति है कि एक तरफ तो हमने वैज्ञानिक तौर पर इतनी तरक्की कर ली और असंभव को संभव कर दिया है और दूसरी तरफ हम अपने सभी बच्चों के लिए शिक्षा के अवसर सुनिश्चित करने तक की योग्यता विकसित करने में सक्षम नहीं बने हैं। यही वह गंभीर प्रश्न है जो अभूतपूर्व मंशा और नई आकांक्षा के रूप में उठ रहा है।

यह प्रश्न विचार योग्य है कि ऐसे परिवारों के समक्ष जीवन की ऐसी कैसी बाध्यताएँ होंगी, ऐसी कैसी गंभीर स्थिति से उपजी मनोदशाएँ होंगी कि वे आज भी अपने बच्चों को स्कूल भेजने में सक्षम नहीं हो पा रहे हैं। हम सभी इस तथ्य पर तो सहमत होंगे कि केवल हम मनुष्य ही नहीं बल्कि हमारे आस पास रहने वाले अन्य सभी जीव–जंतु अपनी संतति की रक्षा एवं देखभाल हेतु प्रयास करते हैं। संभवतः इंसान होने के नाते ऐसा कोई व्यक्ति नहीं होगा जो अपनी भावी पीढ़ी के लिए सोचता एवं प्रयास नहीं करता हो। मनुष्य मात्र का बच्चा होने के नाते क्या सभी बच्चों को अनिवार्य रूप से औपचारिक स्कूली शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिलना नहीं चाहिए? आज की राजनैतिक एवं जनतान्त्रिक नैतिकता के तर्क से इस बात का प्रतिरोध नहीं किया जा सकता कि शिक्षा का सार्वजनीकरण होना चाहिए। अतः 80 और 90 के दशकों के आस–पास यह सवाल तेज़ी से उठा कि यदि देश में अधिकतर परिवारों की यह स्थिति है कि वे अपने बच्चों के भविष्य के बारे में नहीं सोच पा रहे

हैं तो विश्व के सबसे बड़े जनतांत्रिक देश होने के बावजूद हम इस बात पर क्यों रुके बैठे हैं कि बच्चे को शिक्षित करने का दायित्व उसके परिवार का ही है। यह सवाल दुनिया भर में उठ रहा है और ऐसा नहीं है कि इसकी चर्चा सिर्फ हमारे देश में हो रही है।

कैसे बना शिक्षा का अधिकार अधिनियम–2009

1992 में यह प्रश्न एक वाद के अंतर्गत सुप्रीम कोर्ट (सर्वाच्य न्यायालय) में सबसे पहले आया जिसमे एक याचिकाकर्ता ने कहा कि शिक्षा प्राप्त करना उसका मूल अधिकार है। उस समय सभी निचली अदालतों ने यह निर्णय दिया कि शिक्षा का अधिकार मूल अधिकार नहीं हैं। परन्तु सुप्रीम कोर्ट ने उस समय कहा कि हालाँकि ऐसा संविधान में कहीं नहीं लिखा है कि प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करना भारत के नागरिक का मूल अधिकार है परन्तु समसामायिक समाज में शिक्षा से वंचित रहने का सीधा प्रभाव जीवन में मिलने वाले अवसरों एवं उसकी गुणवत्ता पर पड़ता है अतः शिक्षा का अधिकार 'जीने के अधिकार' का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। भले ही शिक्षा का अधिकार मूल अधिकारों की सूची में अलग से नहीं लिखा गया हो, यह जीने के अधिकार में ही निहित है।

वहाँ से देश की राजनीति के ऊपर दबाव बना और संविधान में संशोधन की बात हुई, जिसके परिणामस्वरूप 10 वर्ष बाद, 2002 में संविधान में एक 86वाँ संशोधन हुआ जिसमें अनुच्छेद 21A जोड़ा गया, जिसमें लिखा गया कि 6 से 14 वर्ष के आयु के सभी बच्चों का प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करना उनका मूल अधिकार है। अर्थात सभी बच्चों की शिक्षा सुनिश्चित करना राज्य, सरकार एवं समाज का दायित्व है। शिक्षा के अधिकार को मूल अधिकार बनाने से चिंतन की दृष्टि से जो आधा अधूरा परिवर्तन हुआ था वह सम्पूर्ण बदल गया। और युगों से चले आ रहे इस विचार में भी परिवर्तन हुआ कि बच्चों को शिक्षित करने का मूल दायित्व परिवार का है। इस विचार की केन्द्रीय अभिव्यक्ति हमारी संसद द्वारा सर्वसम्मति से 2009 में पारित आरटीई–एक्ट के रूप में हुई, जो कि एक बड़ा राजनैतिक बदलाव है।

''प्रारम्भिक शिक्षा एक मौलिक अधिकार'' के मायने –

हालाँकि भारत के संविधान में अनेक अन्य मूल अधिकारों का जिक्र है परन्तु किसी मूल अधिकार को लागू करवाने के लिए देश में कोई कानून नहीं बना है। परन्तु शिक्षा का अधिकार एक मात्र ऐसा मूल अधिकार है जिसको लागू करने के लिए आरटीई एक्ट के रूप में एक कानून लाया गया। वैश्विक स्तर पर ऐसा करने वाला भारत पहला देश नहीं है बल्कि दुनिया के अनेक देशों द्वारा ऐसी माँग बहुत पहले से की जा रही है। निश्चित तौर पर ऐसी सम्भावना है कि उस एक्ट में बहुत सी बातें उपयुक्त तथा कुछ बातें अनुपयुक्त हों जिसका पुनः विश्लेषण करने की आवश्यकता हो सकती है। लेकिन एक्ट के मंतव्य, मूल प्रस्ताव एवं मूल दिशा ने एक नये युग का आगाज किया है। और ऐसे युग और समाज का अंत किया है जिसमें अवसरों की समानता होने के बावजूद बच्चों के साथ भेदभाव किया गया। इस प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में जनतंत्र की स्थापना का विचार आगे बढ़ा है। बच्चों के स्कूल जा सकने के अधिकार और सम्भावना के प्रति बच्चों के पारिवारों की समाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक स्थिति एवं लैंगिक कारकों से भेदभाव नहीं होगा। और यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि हमें गौरवान्वित महसूस करना चाहिए कि हम उस स्कूली व्यवस्था के शिक्षक हैं जो हजारों वर्षो से चली आ रही भेदभावपूर्ण स्थिति और असमानता में संशोधन कर रही है।

हमारी भूमिका का बदलता स्वरूप

एक समान्य सा तर्क है, यदि हम परिणामों में गुणात्मक परिवर्तन लाना चाहते हैं तो पहली आधारभूत शर्त यह है कि आदानों (inputs) को गुणात्मक रूप से बदला जाए। आरटीई एक्ट आने के बाद अब बच्चा किसी भी स्थिति या परिवेश का हो, विद्यालयों पर यह जिम्मेदारी है कि वे प्रत्येक बच्चे को स्कूल में लाएँ, पढ़ाएँ और प्रारंभिक शिक्षा में सफल करें। इस एक्ट से पहले स्कूलों और शिक्षकों पर यह दायित्व नहीं था बल्कि उनके ऊपर मात्र इतना दायित्व था कि वे स्कूल खोलें, पाठ्यक्रम बनाएँ और जो आए उनको पढ़ाएँ, जो नियमित आएँ उनको पढ़ाते रहें, जो चले जाए उनको छोड़ दें और जो साल भर आकर भी नहीं पढ़ पाएँ उनको परीक्षा लेकर फेल कर दें।

यह बहुत पुरानी बात नहीं है जब कक्षा एक में नामांकित हुए आधे से अधिक बच्चों को कक्षा 5 से पहले छँटनी करके बाहर कर दिया जाता था और इन छाँटे हुए में से आधे 10 वी से पहले बाहर हो जाते थे। योग्य–अयोग्य श्रेणियों में बच्चों को बाँटते तथा छाँटते हुए जो बच जाते थे, स्कूल वैसे बच्चों की शिक्षा पूरी करके खुश थे। ऐसे में जो परिवार योग्य होते थे तथा स्कूल की माँग एवं कमी की पूर्ति करके बच्चों की उपलब्धि सुनिश्चित कर सकते थे, स्कूल उनके लिए काम करता था। और इस व्यवस्था पर वर्षो तक कोई प्रश्न नहीं उठा क्यूंकि हम समाजिक, राजनैतिक एवं नैतिक रूप से ऐसा मानते चले आ रहे थे कि सभी बच्चे स्कूलों में आ नहीं सकते और आ भी जाएँ तो सफल नहीं हो सकते। अधिकांश लोग इस विचार से सहमत थे कि सभी बच्चे और बच्चियाँ पढ़–लिख नहीं सकते और यह भी कहा गया कि क्या होगा यदि सब पढ़ जाएँगे और यदि महिलाएँ पढ़ जाएँगी तो घर कौन चलाएगा। उस काल में स्कूल का समस्त ढाँचा, क्रियाकलाप उनका दृष्टिकोण, रीति–नीति, प्रत्येक नियम उस स्थिति के अनुसार बने हुए थे। आज स्कूली व्यवस्था जिस सिद्धांत पर पहुँची है वह पहले से चली आ रही व्यवस्था से बहुत अलग है।

यह एक सर्वमान्य शैक्षिक, मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि मनुष्यों का प्रत्येक बच्चा यदि कुछ अपवादों को छोड़ दें तो इस योग्य है कि प्राथमिक कक्षाओ में जिन ज्ञान, योग्यता, समझ, कौशल एवं अवधारणाओं के निर्माण की उनसे अपेक्षा की जाती है वह उसे प्राप्त कर सकता है। हर बच्चा औसत स्तर पर सफल हो सकता है। हमारे देश और मानवजाति के कल्याण के नाते राजनैतिक चेतना यह कहती है कि ऐसी स्थिति में इन सभी बच्चों को, चाहे वे जिस भी परिवेश से हों, विद्यालय में लाने, बनाए रखने और सीखने में सफल करने के उद्देश्य से अब और समझौता नहीं किया जा सकता है।

यहाँ हमें यह भी समझने की ज़रूरत है कि शिक्षित होने के अधिकार को हम किस अर्थ में समझ रहे हैं ? क्या यह स्कूल में नामांकित होने, यदा–कदा आते रहने या फिर केवल प्रमाणपत्र प्राप्त करने का अधिकार है? क्या मात्र इन्हीं अधिकारों के लिए इतने क्रांतिकारी परिवर्तन किये गए हैं? इसमें दो राय नहीं है कि कोई भी समझदार व्यक्ति शिक्षा के अधिकार की इस व्याख्या से सहमत नहीं होगा। शिक्षित होने का अधिकार वह अधिकार है जिसमें हर परिस्थिति में रह रहे प्रत्येक बच्चे को 5–8 वर्ष के अच्छे शैक्षिक अवसरों एवं अनुभवों से गुजारना, है जिसमें वह प्राथमिक/प्रारंभिक कक्षाओं की औसत क्षमताओं एवं योग्यताओं को विकसित कर, अपने समकक्ष दूसरे बच्चों के साथ समान रूप से खड़ा हो सके। शिक्षा का अधिकार, असफल होने का अधिकार नहीं है।

हमारी समक्ष चुनौती का वास्तविक स्परूप

हमारे स्कूलों में आने वाले अधिकांश बच्चे वे बच्चे हैं जिन्हें पीढ़ियों से शिक्षा के अधिकार से वंचित रखा गया है। यह एक यथार्थ है कि हम शिक्षक वर्ग उन विद्यालयों के संवाहक हैं जो उन बच्चों के साथ न्याय करने का आशय निर्मित कर रहे हैं जिनके साथ सैकड़ों वर्षो से अन्याय हो रहा है। सरकारी स्कूल में आने वाले अधिकतर बच्चे, वे बच्चे हैं जो पूर्णतः असमर्थित हैं तथा जिनके स्कूल आने और सीखने के मार्ग में बहुत सी सामाजिक, आर्थिक अथवा सांस्कृतिक बाधाएँ हैं। ऐसी स्थिति में हमारे होने का महत्त्व तभी है जब हम उनके साथ समानता का न्याय कर सकें।

हम और आप, स्कूली शिक्षा के इतिहास में एक अग्रदूत के रूप में हैं तथा ये न्याय का युग हमारे साथ आ रहा है। निसंदेह इसमें बहुत सी चुनौतियाँ हैं परन्तु इस नये युग का महत्त्व इसी में है कि हम इन चुनौतियों को परास्त कर सकने वाले स्कूल और शिक्षक का निर्माण कर सकें। ऐसी स्थिति में हमें गंभीरतापूर्वक विश्लेषण करने की जरुरत है कि यदि हमें ऐसे बच्चों को विद्यालय में लाना, सिखाना और सफल करना है तो हमारे आकलन, मूल्यांकन, नियम–कानून एवं शिक्षण विधा आदि में कहाँ–कहाँ परिवर्तन की आवश्यकता होगी। संभवतः इसको मापने की एक ही कसौटी है कि प्रत्येक बच्चा विद्यालय आए और वह प्राथमिक शिक्षा को पूरी करने तक विद्यालय में बना रहे और हम सफल शिक्षक के रूप में ऐसी कक्षा–कक्ष का निर्माण करें जिसमें कोई बच्चा असफल न हो।

शिक्षा के क्षेत्र में समझ रखने वाले कई व्यक्तियों की राय है कि हमें वर्तमान शिक्षा में से 'असफल' (fail) शब्द को हटा देना चाहिए। हमारे राजकीय विद्यालयों का शिक्षक अब असफल करने वाला शिक्षक नहीं है बल्कि वह एक ऐसा शोधकर्ता एवं नई विधाओं का सृजक है जिसकी दृष्टि प्रत्येक बच्चे को सफल करने पर दृढ़ता से टिकी है। व्यवहारिक तौर पर बच्चे अनियमित तथा आयु अनुरूप आगे पीछे आएँगे परन्तु पाँच वर्ष बच्चों को प्राथमिक कक्षाओं की बुनियादी क्षमताओं को सिखाने के लिए पर्याप्त हैं। बच्चे को असफल करने का अर्थ यह है कि हम बच्चे को वापिस उसी स्थिति में बनाए रख रहे हैं। हम पहले भी बात कर चुके हैं कि बुनियादी लेखन–पठन की क्षमताएँ प्रत्येक बच्चा पाँच वर्षो में सीख सकता है। अतः हमें अपने वातावरण, सोच–विचार, रीति–नीति तथा योजनाओं में ऐसे संशोधनों की आवश्यकता है जिसमें हम प्रत्येक बच्चे को सफल कर सकें।

पिछले कुछ वर्षों से शिक्षक वर्ग सबसे बड़े राजनैतिक–सामजिक कार्यकर्ता के रूप में उभरे हैं। समाज में नागरिकों के अवसर और अधिकारों की क्या स्थिति होनी चाहिए? वे इसका संशोधन कर रहे हैं। हमें स्वयं को तथा अपने विद्यालयों को समझने और उनसे की जाने वाली अपेक्षा को समझने की जरुरत है। इस बात को गंभीरता से लेने की ज़रूरत है कि इन नई अपेक्षाओं के साथ न्याय कर पाने के लिए अपनी मान्यताओं और क्रियाकलापों का भी पुनरावलोकन करना होगा। वृहद सामाजिक हित में हर पक्ष को इस कसौटी पर कसना होगा कि प्रत्येक बच्चा विद्यालय आए एवं हम यह सुनिश्चित कर पाएँ कि वह सफल हो।

परिप्रेक्ष्य विकास सत्र–2 गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की अवधारणा

सत्र के उद्देश्य :

- प्रतिभागी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के विभिन्न घटकों को समझ पाएंगे।
- शिक्षा में गुणवत्ता के अर्थ से परिचित हो सकेंगे।
- प्रतिभागी शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले कारकों को समझने में सक्षम हो पाएंगे।

सत्र की विधा : गतिविधि व चर्चा –

गतिविधि : संदर्भ व्यक्ति द्वारा प्रतिभागियों में से 12 प्रतिभागियों को गतिविधि हेतु आगे आने के लिए अनुरोध करना।

- प्रत्येक प्रतिभागी के माथे पर एक पहचान का टैग बाँधा जाएगा तथा उस पर क्या लिखा है यह उस प्रतिभागी को पता नहीं होगा।
- हर प्रतिभागी एक–दूसरे के टैग को देख पाएंगे परन्तु स्वयं के माथे पर क्या लिखा है इसकी जानकारी उन्हें नहीं होगी।
- सभी प्रतिभागियों को एक–दूसरे से उनकी वर्तमान पहचान के आधार पर व्यवहार करना होगा। ध्यान रहे कि व्यवहार करते समय प्रतिभागी शाब्दिक संचार का सहारा नहीं ले सकते हैं। प्रतिभागियों को केवल अशाब्दिक संचार व अपने हावभाव से ही व्यवहार करना होगा।
- यह ध्यान रखना होगा कि उनके साथ जो भी व्यवहार हो, उन्हें जो दूसरे की पहचान है उसी अनुरूप व्यवहार करना है।

संदर्भ व्यक्ति सभी प्रतिभागियों को कुल 10–15 मिनट का समय देगा। गतिविधि समाप्त होने पर संदर्भ व्यक्ति निम्न सवाल पूछेगा –

- आप उस समय कैसा महसूस कर रहे थे जब अन्य प्रतिभागी आपके साथ एक अलग सा व्यवहार कर रहे थे?
- आपने अन्य प्रतिभागियों के व्यवहार से स्वयं के बारे में क्या छवि अपने मन में निर्मित की?

प्रतिभागियों से बातचीत के दौरान सामान्य पैटर्न जो देखे जा सकते हैं –

- सभी प्रतिभागी उस पहचान को काफी करीब से बता पाएंगे जो की उनको दी गई थी।
- दूसरे प्रतिभागियों के व्यवहार से प्रतिभागी अपनी पहचान निर्मित कर पाएंगे।

संदर्भ व्यक्ति प्रतिभागियों से गतिविधि का विश्लेषण करने तथा खुद की समझ की व्याख्या करने के लिए कहेंगे। सभी प्रतिभागी अपनी समझ के अनुसार भिन्न–भिन्न उत्तर देंगे।

पूरी चर्चा में निम्नलिखित बिन्दुओं पर ज़ोर देने का प्रयास करें –

- हमारा व्यवहार अलग–अलग स्थितियों में भिन्न होता है व इसका कारण हमारे भीतर गहरी बसी मान्यताएँ हैं जो हम समाजीकरण की प्रक्रिया के तहत प्राप्त करते हैं।
- एक शिक्षक होने के नाते, यह आवश्यक है कि हम अपने भीतर यह खोजें कि क्या हम वास्तव में समता के विचार में विश्वास रखते हैं? क्या हम उस अनुरूप व्यवहार करते हैं? हमारी सक्रियता, उत्साह व लक्ष्य इस बात से गहरे जुड़े हैं।
- समतुल्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लक्ष्य को समझने हेतु हमें गुणवत्ता के मायनों को समझना आवश्यक है (*फेसिलिटेटर संभागियों से पहले गुणवत्ता की उनकी समझ को समूह में साझा करने को कहें व उन बिन्दुओं को श्यामपट्ट पर लिखें*)
- गुणवत्तापूर्ण शिक्षा व्यवस्था को सुनिश्चित करने हेतु हमें निम्न प्रश्नों पर सही निर्णय करने की आवश्यकता है–
  - **लक्ष्यों की उपयुक्तता –** गुणवत्ता के लिए जरूरी है कि हमने शिक्षा के लक्ष्यों का उचित निर्धारण किया हो।
  - **वातावरण एवं स्थिति –** उपयुक्त वातावरण एवं आधारभूत परिस्थितियों की व्यवस्था हो, जैसे– कि विद्यालय हो, शिक्षक हो तथा सभी शिक्षक कार्यरत हों आदि।
  - **विधाएँ एवं विषयवस्तु –** उचित विषयवस्तु एवं विधियों का चयन हो जो कि लक्ष्यों के अनुरूप हो।
  - **अवसर, अनुभव एवं गतिविधि –** बच्चों को किस प्रकार के अवसर दिए जा रहे हैं ? बच्चों को मिलने वाले अनुभव का स्वरूप कैसा है? किस प्रकार कि गतिविधियाँ या क्रियाकलाप किये जा रहे है उनका उपयुक्त चयन हो।
  - **अन्तर्क्रिया एवं अन्तर्सम्बन्ध –** सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में बच्चों की शिक्षकों, सहपाठियों एवं पाठ्यसामग्री के साथ अन्तर्क्रिया एवं सम्बन्धों का स्वरूप क्या हो तथा बच्चों का पाठ्यपुस्तक और सिखाने वालों के साथ सम्बन्ध कैसा हो ?
- हमें इस संदर्भ में निम्न बातों के बारे में समझ होनी चाहिए –
  - बच्चों के बारे में समझ।
  - अधिगम प्रक्रिया के बारे में समझ।
  - ज्ञान के प्रति समझ।
  - शिक्षण/सीखने सिद्धांतों की समझ।

- गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के संदर्भ में मुख्य बिन्दु जिनके सापेक्ष हमें अपने विद्यालयों का आकलन करना चाहिए, वे हैं –
  - उपलब्धता की समस्या।
  - समग्रता की समस्या।
- समग्रता से अभिप्राय लक्ष्यों की समग्रता से है। समग्र पाठ्यक्रम वह है जिससे बच्चों के व्यक्तित्व के समस्त पक्षों का विकास हो –
  - शारीरिक।
  - भाषाई।
  - संज्ञानात्मक।
  - भावात्मक।
  - सामाजिक व स्वःबोध।
  - मूल्यों व सामाजिक व्यवहार की समझ।
- लक्ष्यों की समग्रता व उपयुक्तता को दिए गए शैक्षिक उद्देश्यों के आयामों के संदर्भ में समझा जा सकता है–
  - आधारभूत ज्ञान।
  - सीखे हुए को नये संदर्भ में लागू करने की योग्यता।
  - ज्ञान का एकीकरण– ज्ञान टुकड़ों में ना होकर एक समग्र रूप में बच्चे के मस्तिष्क में व्यवस्थित है।
  - स्वयं को तथा दूसरे को जानने की क्षमता का विकास।
  - दूसरों के प्रति सद्भाव संवेदनशीलता।
  - प्रयत्नों की सम्पूर्णता।

उपयुक्तता + उपलब्धता + समग्रता + अविभेदित + प्रयत्नों की सम्पूर्णता = गुणवत्तापूर्ण शिक्षा

गतिविधि के समेकन हेतु की जाने वाली चर्चा

अमूमन जब हम शिक्षकों के बारे में बातचीत करते हैं तो कहते हैं कि उनमें उत्साह की भारी कमी है या उनमें कार्य के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण नहीं है। हालांकि व्यक्तियों की मनःस्थिति एवं अभिप्रेरणा को लेकर ऐसा बहुत कम होता है कि वे सर्वदा उचित व्यवहार करते हों और हर स्थिति में सकारात्मक रहते हों अथवा सर्वदा नकारात्मक और अनुचित हों। ज्यादातर परिस्थितियों में हमारी मनःस्थिति विभेदित होती है। अर्थात् हम किन्हीं परिस्थितियों, प्रसंगों या सन्दर्भों में सकारात्मक हो सकते हैं तथा किन्हीं और परिस्थितियों, प्रसंगों या सन्दर्भों में नकारात्मक हो सकते हैं। हम सभी के व्यक्तित्व में सकारात्मक तथा नकारात्मक दृष्टिकोण दोनों ही विद्यमान होते हैं, जिनकी अभिव्यक्ति में हम काफी लचीलापन रखते हैं। यदि हम अपने व्यवहार को किन्हीं विशेष व्यक्तियों, संदर्भों एवं परिस्थितियों के लिए स्थिर कर लें तो वह हमारा स्थायी व्यवहार हो जाता है। हमारी अभिवृत्ति, मनोवृत्ति, स्थितियों के अनुसार भिन्न–भिन्न हो जाती हैं और उसके अनुरूप हमारे प्रयास व इच्छाएँ स्थिति के सापेक्ष बदल जाती हैं।

सवाल यह है कि हम ऐसा क्यों और कैसे करने लगते हैं। यदि हम अभी खेले गए खेल का विश्लेषण करें तो हम देखते हैं कि हम अलग–अलग लोगों के साथ अलग–अलग तरह का व्यवहार कर रहे थे। उदाहरण के तौर पर जब ऐसा व्यक्ति हमारे सामने आ रहा था जिसके माथे पर 'गधा' लिखा था तो हम सभी उसके साथ एक निश्चित तरह का नकारात्मक व्यवहार कर रहे थे। उसके विपरीत जब ऐसा व्यक्ति हमारे सम्मुख आया जिसके माथे पर 'राजा' या 'अधिकारी' लिखा था तो हम उसके साथ पहले से अलग, सम्मानजनक व्यवहार कर रहे थे। अतः हम देखते हैं कि भिन्न परिस्थितियों में व्यवहार के भिन्न–भिन्न रूप हमारे मन में बहुत गहराई से बैठे हैं और इनको हम बिना सोचे करते हैं। क्योंकि अलग–अलग प्रास्थिति के लोगों के प्रति अलग–अलग व्यवहार करने की वृत्ति हमने समाज की मुख्यधारा से ली है। इस पैटर्न में एक प्रकार की एकरूपता है। यह हमें सांस्कृतिक विरासत के रूप में मिला है।

यदि किसी कार्य में हमारा व्यक्तिगत या पारिवारिक हित होता है तो हम उसके प्रति हमेशा सकारात्मक और उचित ढंग से सक्रिय होते हैं। इसी प्रकार जब किसी कार्य में हमारा व्यक्तिगत फायदा नहीं होता है तो हम उसके प्रति उदासीन और निष्क्रिय होते हैं। ऐसा अन्तर/विभेदन करना हमने अपने समाज से सीखा होता है। उदाहरण के लिए शिक्षा के संदर्भ में; अपने खुद के बच्चों के लिए हमारी आकांक्षाएं वैसी नहीं होंगी जैसी हम अपने विद्यालय में आने वाली एक दलित बच्ची के संदर्भ में रखते हैं। समस्या यह है कि समाज में हमारे अपने व्यक्तित्व, मनोवृत्तियों व चरित्र का ऐसा भेदभावपूर्ण निर्माण हो जाता है।

हम समझ सकते हैं कि हमारे शिक्षक साथियों के उत्साह और काम करने की इच्छा का सवाल भी एक ऐसा ही गहरा सांस्कृतिक सवाल है। हमारे व्यक्तित्व का निर्माण ऐतिहासिक, सांस्कृतिक व सामाजिक प्रक्रियाओं का परिणाम है जिसको बदलना आसान कार्य भी नहीं है।

स्कूली शिक्षा में जो असमानता और भेदभाव है वह भी नितान्त व्यक्तिगत प्रश्न नहीं है। दरअसल व्यक्तियों से ऊपर सामाजिक व्यवस्थाओं को भी देखें तो हम पाएंगे कि वे भी भेदभावपूर्ण हैं। इन असमानताओं को हमने अपने भीतर अच्छे से आत्मसात कर लिया है। हमारे अपने बच्चे के लिए आकांक्षाएं, प्रयत्न एवं सरोकार दूसरे

बच्चों के लिए आकांक्षाओं, प्रयत्नों एवं सरोकारों से बहुत अलग होते हैं। हमारी मूल समस्या यह है कि हमने एक असमान एवं अन्यायपूर्ण व्यवस्था में सहज बने रहना सीख लिया है। अब 21वीं शताब्दी में हम वैचारिक रूप से तो ऐसा मानने लगे हैं और सार्वजनिक रूप से ऐसा कहते भी हैं कि सभी बच्चों को समतुल्य व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। हालांकि, हम में से अनेक लोगों को अन्तर्मन, भावनाएँ एवं नज़रिया इस विचार के अनुरूप ढले हुए नहीं हैं।

ऐसी स्थिति में हम अब अपने आप को कैसे शिक्षक के रूप में देखना चाहते हैं ? जो प्रचलित भेदभावपूर्ण मानसिकता से ग्रस्त रहे या ऐसा जो समानता के मूल्य को आत्मसात कर सभी बच्चों के लिए समभाव रखते हुए अपना दायित्व निभाए? शिक्षा में न्याय और जनतांत्रिक स्थिति को उत्पन्न करने के लिए हमें दूसरे प्रकार के शिक्षकों की आवश्यकता है। ऐसे शिक्षक, जो हमेशा सभी बच्चों के लिए सकारात्मक व उचित प्रयत्न करें। हमें विचार करने की ज़रूरत है कि क्या हम परम्परागत रूप में उसी तरफ खड़े रहना चाहते है जहाँ असमानता एवं अन्याय के प्रति सहजता है या हम इसके विपरीत समानता व न्यायपूर्ण स्थिति के अगले चरण पर पहुँचने का प्रयास करना चाहते हैं ?

यदि हम इसी प्रसंग को शिक्षा के मुख्य प्रश्न ''गुणवत्तापूर्ण शिक्षा'' से हमारा क्या आशय है, से जोड़ें तो हम गुणवत्ता के प्रश्न को और व्यापक अर्थ में समझ सकते हैं। यहाँ प्रश्न समतुल्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के हमारे लक्ष्य में गुणवत्ता के मायनों को समझना है।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अर्थ क्या है?

गुणवत्ता एक बहु आयामी जटिल अवधारणा है जिसको किसी एक छोटी एकांगी परिभाषा में व्यक्त नहीं किया जा सकता है।

'गुणवत्तापूर्ण शिक्षा' व्यवस्था एवं प्रक्रिया का निर्माण करने के लिए हमें निम्न प्रश्नों पर सही निर्णय करने की आवश्यकता होगी –

1. **लक्ष्यों की उपयुक्तता –** गुणवत्ता के लिए ज़रूरी है कि हमने शिक्षा के लक्ष्यों का उचित निर्धारण किया हो।
2. **वातावरण एवं स्थिति –** उपयुक्त वातावरण एवं आधारभूत परिस्थितियों की व्यवस्था हो, जैसे– कि विद्यालय हो, शिक्षक हो तथा सभी शिक्षक कार्यरत हो आदि।
3. **विधाएँ एवं विषयवस्तु –** उचित विषयवस्तु एवं विधियों का चयन हो जो कि लक्ष्यों के अनुरूप हो।
4. **अवसर, अनुभव एवं गतिविधि –** बच्चों को किस प्रकार के अवसर दिए जा रहे हैं ? बच्चों को मिलने वाले अनुभव का स्वरूप कैसा है? किस प्रकार कि गतिविधियाँ या क्रियाकलाप किये जा रहे हैं ? उनका उपयुक्त चयन हो।
5. **अन्तर्क्रिया एवं अन्तर्सम्बन्ध –** सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में बच्चों का शिक्षकों, सहपाठियों एवं पाठ्यसामग्री के साथ अन्तर्क्रिया एवं सम्बन्धों का स्वरूप क्या हो तथा बच्चों का पाठ्यपुस्तक और सिखाने वालों के साथ सम्बन्ध कैसा हो ?

उपरोक्त सभी बिंदुओं के निर्धारण के लिए हमें सही कसौटी या मानक तय करने पड़ेंगे और इसके लिए हमें निम्न बातों की समझ होना आवश्यक होगा :–

- **बच्चों के बारे में समझ –** बच्चों और बचपन की समझ तथा बच्चों की स्वाभाविक आयुगत आवश्यकताएँ एवं क्षमताएँ क्या होती हैं, उसकी समझ ; क्योंकि वयस्कों की तुलना में बच्चों को जगत को देखने, समझने, चिंतन करने का तरीका एवं उनका सामाजिक व्यवहार आदि बहुत भिन्न होता है।

- **अधिगम प्रक्रिया के बारे में –** सीखना क्या है तथा सीखने की प्रक्रिया कैसे होती है? एक बच्चे का सीखना कैसे होता है? यदि हम किसी प्रक्रिया में सहयोग या हस्तक्षेप करना चाहते हैं तो सबसे पहले हमें उस परिघटना की प्रकृति को समझना आवश्यक है। अतः बच्चों को सहयोग करने के लिए हमें उसकी प्रकृति को समझने की आवश्यकता होगी।

- **ज्ञान के प्रति समझ –** ज्ञान के विषय में हमारी समझ क्या है ? ज्ञान निर्माण एवं ज्ञान की प्रमाणिकता के बारे में समझ।

- **शिक्षण/सिखाने के सिद्धांतों की समझ –** सिखाना कैसे होता है, इसकी समझ।

इसके साथ–साथ गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करने के लिए हमें निम्न बिन्दुओं पर भी स्थिति का आकलन करने की आवश्यकता होगी –

उपलब्धता की समस्या – अभी भी प्राथमिक शिक्षा की एक मुख्य समस्या उसकी उपलब्धता/अनुपलब्धता का सवाल है। 1910–10 में केवल 10 प्रतिशत बच्चे ही प्राथमिक शिक्षा के दायरे में थे और इस 10 प्रतिशत का केवल 20 प्रतिशत ही कक्षा 5 तक पहुँच पाते थे। 1990–95 तक नामांकन का यह दायरा 10 प्रतिशत से बढ़कर 90 प्रतिशत से अधिक हो गया है लेकिन अभी भी इन 90 प्रतिशत नामांकित हुए बच्चों में से 70 प्रतिशत (कुल का 63 प्रतिशत) बच्चे ही प्राथमिक शिक्षा की पूर्णता की स्थिति तक पहुँच पाते हैं।

समग्रता की समस्या : प्राथमिक शिक्षा के लिए जो लक्ष्य हम निर्धारित कर रहे हैं वे बहुत संकीर्ण हैं। एक अच्छी शिक्षा के बारे में जब भी हम व्याख्या एवं वर्णन करते हैं तब एक सर्वांगीण लक्ष्यों की छवि उभरती है जिनमें सभी बच्चों का विकास हो।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को देखने समझने का एक और पहलू यह है कि इससे बच्चों के व्यक्तित्व के समस्त पक्षों का विकास हो। प्राथमिक कक्षाओं में आने वाले 6–11 वर्ष के प्रत्येक बच्चे के व्यक्तित्व के निम्न पक्ष है –

• शारीरिक • भाषायी • संज्ञानात्मक • भावात्मक • सामाजिक एवं स्वःबोध • मूल्यों एवं सामाजिक व्यवहार की समझ

शिक्षा की गुणवत्ता को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि हम ऐसे शैक्षिक उद्देश्यों, विधाओं, विषयवस्तु एवं गतिविधियों को अपनाएँ जिससे कि बच्चे के व्यक्तित्व के प्रत्येक पहलू का उचित विकास हो सके। गुणवत्ता से तात्पर्य केवल चुने हुए अकादमिक विषयों की जानकारियाँ देने और उनमें उपलब्धियाँ हॉसिल करने से ही नहीं है बल्कि यहाँ गुणवत्ता से तात्पर्य यह है कि बच्चे के व्यक्तित्व का समग्र विकास हो। हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि क्या हम सीखने में बच्चों की सक्रियता व अभिरुचि को बनाए रखने में सक्षम हैं या नहीं। क्या हम

उनमें पढ़ने/सीखने के प्रति अभिरुचि, सकारात्मकता और रोचकता का निर्माण कर पा रहे हैं या नहीं ? क्या हम बच्चे को यह सिखा पा रहे हैं कि सीखना कैसे होता है (सीखने कि स्वायत्तता) ? ताकि बच्चा नई स्थितियों में आत्मनिर्भर होकर सीख सके।

प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्यों की समग्रता एवं उपयुक्तता को ध्यान में रखने पर शैक्षिक उद्देश्यों के निम्न आवश्यक आयामों का चित्र उभरता है –

आधारभूत ज्ञान : बच्चे द्वारा निर्मित आधारभूत समझ एवं स्थाई स्मरण की विषयवस्तु।

लागू करने की योग्यता व कौशल : ज्ञान को अपरिचित एवं नये संदर्भों में एवं समस्याओं के समाधान में उपयोग करना। क्या हम बच्चों में ऐसी योग्यता उत्पन्न कर पा रहे हैं जिसके माध्यम से बच्चा प्राप्त जानकारी एवं कौशलों को नए/भावी संदर्भों में इस्तेमाल कर पाए ?

ज्ञान का एकीकरण : कहीं बच्चों को दिया जाने वाला ज्ञान टुकड़ों में तो नहीं है ? क्या बच्चा अपने पूर्व में प्राप्त ज्ञान को नए मिले ज्ञान से जोड़ पा रहा है या नहीं ? हमें बच्चों को ऐसे सिखाना चाहिए जिससे कि उनकी आरंभिक अवधारणाएँ, उच्चतर सुसंगत अवधारणाओं के रूप में विकसित होती चलें। ऐसे ही उनके ज्ञान का विकास होगा और उनकी व्यापक समझ निर्मित होगी।

स्वयं को तथा दूसरों को जानने की क्षमता का विकास : क्या बच्चे खुद को एवं अन्य लोगों को समझने की समझ विकसित कर पाए ?

देखभाल : बच्चों की भावनाएँ और दृष्टिकोण कहीं बहुत आत्मकेन्द्रित तो नहीं हैं तथा यह दूसरों के प्रति लगाव, सद्भाव, सहयोग एवं परानुभूति की क्षमता का विकास कर पाए हैं या नहीं ?

उपयुक्तता : हमारे लक्ष्य उपयुक्त हैं या नहीं ?

अविभेदित : कहीं यह भेदभावपूर्ण तो नहीं है। क्या हम सभी बच्चों को समभाव से देख रहे हैं ? सभी बच्चों के लिए हमारी आकांक्षाएँ, अपेक्षाएँ एवं लक्ष्य कमोवेश समान होने चाहिए।

प्रयत्नों की सम्पूर्णता : कहीं ऐसा तो नहीं है कि हम लक्ष्यों कि उपयुक्तता जानने के बाद भी प्रयास नहीं कर रहे हैं क्योंकि हमारा दृष्टिकोण भेदभावपूर्ण है ?

अतः गुणवत्तापूर्ण शिक्षा अनेक तत्वों एवं प्रक्रियाओं के सुसंगत समायोजन एवं पूर्ति का परिणाम है।

उपयुक्तता + उपलब्धता + समग्रता + अविभेदित लक्ष्य + प्रयत्नों की सम्पूर्णता = गुणवत्तापूर्ण शिक्षा

यदि हम एक जागरूक शिक्षक के रूप में अपना मन मस्तिष्क खोलकर उपरोक्त बिन्दुओं के बारे में सोचेंगे और उन्हें ध्यान में रखकर कार्य करना आरंभ करेंगे तो हम गुणात्मक शिक्षा की अवधारणा के वृहद सैद्धान्तिक आयामों तथा व्यावहारिक कारकों को संतुलित ढंग से समझ पाएंगे। फलतः अपने विद्यालय में अवश्य ही गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की स्थितियाँ एवं संभावनाएँ स्थापित कर पाएंगे।

बच्चे का समग्र विकास

समझना सीखना

- शिक्षण के माध्यम की भाषा में सुन कर समझ सकता है, धारा–प्रवाह बोल, पढ़ और लिख सकता है।
- आत्मविश्वासी है, इन कौशलों का प्रयोग इन उद्देश्यों के निमित्त करने के लिए इच्छुक है –
  - संप्रेषण।
  - अपनी सृजनशीलता का विकास।
  - ज्ञान की बढ़ोतरी।
- गणित की अवधारणाओं व कौशल में रुचि और समझ है, और दैनिक जीवन की स्थितियों में प्रयोग करने में समर्थ।
- अपने आसपास के पर्यावरण के बारे में कुछ मूलभूत ज्ञान रखता है और जहाँ आवश्यक हो इस ज्ञान का प्रयोग कर सकता है।
- प्रश्न पूछ कर, अवलोकन, प्रयोगों, खोजबीन, तार्किक चिंतन व समस्या सुलझाने के कौशलों द्वारा जो सीख है उसे आगे बढ़ाने की रुचि और कौशल रखता है।

करना सीखना

- दैनिक जीवन की स्थितियों में सुरक्षा व कारगरता से साधारण औजार इस्तेमाल कर सकता है।
- अपने हाथों से काम करने में गौरव महसूस करता है।
- काम करने संबंधी अच्छी आदतें प्रदर्शित करता है, जैसे साफ–सफाई, बारीकी का ध्यान रखना, औजारों व सामग्री की देखरेख आदि।
- जो भी करे उसमें श्रेष्ठता हासिल करने की जरूरत प्रदर्शित करे।
- स्वास्थ्य संबंधी अच्छी आदतों का प्रदर्शन करे।
- सरल व सुरक्षित प्रयोग अपने आप कर सके।

एक साथ जीना सीखना

- दूसरों के साथ दोस्ती करने और निभाने की क्षमता रखता है।
- प्रभावकारी संप्रेषण के कौशल प्रदर्शित करता है।
- शाला के अंदर और बाहर खेल–कूद और अपनी पसंद की गतिविधियों में भाग लेता है।
- दूसरों की भावनाओं और जरूरतों की और संवेदनशीलता दिखाता है।
- मिल–बाँटने, दया, सहयोग, सहनशीलता व दूसरों की सराहना करने की अभिवृत्ति का प्रदर्शन करता है।
- कार्य व खेल में किसी समूह में नेतृत्व और सदस्यता दोनों प्रभावकारी ढंग से निभाता है।

---

* साभार : एनसीईआरटी–1998, शिक्षा के पहले कदम

पूर्ण होना सीखना

- अपने बारे में अच्छा महसूस करता है, आत्मविश्वास रखता है, और अपने आप को मानव व सीखने वाले के रूप में समझता है।
- शाला के अंदर व बाहर साधारण स्थितियों में अपने दिमाग का प्रयोग करने और स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता और आत्मविश्वास रखता है।
- दूसरों व पर्यावरण के लिए आदर व चिंता व्यक्त करता है।
- अच्छी व्यक्तिगत आदतें रखता है।
- सृजनशीलता व कल्पना के उपयोग के माध्यम से अपने आपको अभिव्यक्त करने में रुचि और आत्मविश्वास रखता है।
- अपने संदर्भ के लिए विशिष्ट कुछ मूल्यों को अर्जित करता है।
- पर्यावरण में सौंदर्य की सराहना करता है और सौंदर्य की समझ दिखाता है।
- अपनी संस्कृति व परंपरा की सराहना करता है और भारतीय होने में गौरव महसूस करता है।

परिप्रेक्ष्य विकास सत्र–3 अधिगम एवं विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षाशास्त्र

सत्र के उद्देश्य :

1. प्रतिभागी बाल केन्द्रित शिक्षण के विभिन्न आयामों को समझ पाएंगे।
2. प्रतिभागी बाल विकास की विभिन्न अवस्थाओं को समझ पाएंगे।
3. सी. सी. पी. आधारित शिक्षण के इतिहास को समझ पाएंगे।
4. समस्त बच्चों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने वाले विभिन्न कारकों को समझ पाएंगे।

संदर्भ व्यक्ति द्वारा यह पूरी चर्चा गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पर केंद्रित की जाएगी जिसके अंतर्गत बाल केंद्रित शिक्षण, गतिविधि आधारित शिक्षण आदि पर बात की जाएगी।

विधा : सत्र संचालन की विधा मुख्यतः संवाद रहेगी। इसमें संदर्भ व्यक्ति संभागियों को अपने मत रखने हेतु प्रेरित करेंगे। संदर्भ व्यक्ति इस बातचीत को उपसमूहों में नोट/वीडियो के अध्ययन के माध्यम से कर सकते हैं व इसके उपरांत समेकित करने का कार्य दे सकते हैं।

बातचीत हेतु प्रस्तावित बिन्दु

सीखने के मुख्य सिद्धान्त –

1. सीखना सीखने वाले के अंदर होता है।
2. सीखना सीखने वाले की सक्रियता एवं संलग्नता से होता है।
3. सीखने वाला अपने वर्तमान के ज्ञान, समझ, अनुभवों, अभिरुचियों, क्षमताओं व योग्यताओं के आधार पर ही सीखता है।
4. सीखने वाले द्वारा बाह्य जगत (भौतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक) से अन्तर्क्रिया सीखने का मुख्य स्रोत होती है।
5. नई जानकारी एवं अनुभव का सीखने वाले द्वारा अर्थ निर्माण किया जाना ही अर्थपूर्ण सीखना होता है।

हमारे सिखाने के प्रयास यदि सीखने के उपरोक्त सिद्धांतों के संगत होंगे तभी हम सिखाने में सफल हो पाएंगे।

- हमारे विद्यालयों का आज का यथार्थ यह है कि हमारी आम कक्षाएँ बच्चों के सीखने के स्तरों के संदर्भ बहुश्रेणीय हैं व उनके साथ उपयुक्त कार्य नहीं हो पा रहा।
- बालकेन्द्रित शिक्षण का मुख्य अभिप्राय, सीखने के सिद्धान्तों के अनुरूप, सभी बच्चों को, उनकी ज़रूरतों के अनुरूप आवश्यक मदद कर पाना है। सतत व समग्र आकलन व गतिविधि आधारित शिक्षण बालकेन्द्रित होने को प्रक्रियाएँ हैं।
- सभी बच्चों के लिए समतुल्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का सपना तभी संभव है जब सभी बच्चों को उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप उपयुक्त समर्थन मिल पाएगा।

सीखने की प्रक्रिया एवं बालकेन्द्रित शिक्षा –

शिक्षा के क्षेत्र में शायद सीखना सबसे प्रमुख अवधारणा है। इसको ठीक से जाने व समझे बिना सही मायनों में हम शिक्षक के तौर पर अपने अध्यापन कार्य का मूल्यांकन ही नहीं कर सकते। अगर हमारे अध्यापन के तौर–तरीके बच्चों की सीखने की प्रक्रिया के अनुरूप नहीं है तो उन्हें बदलने की ज़रूरत है, क्योंकि ऐसा ना करने पर हमारे प्रयास हमें अधिकतम परिणाम नहीं दे सकते या कभी–कभी ऐसा भी हो सकता है कि हमारे तरीके बच्चों की मदद करने की बजाय अवरोध या असहजता उत्पन्न कर रहे हों। सीखना क्या होता है ? बच्चों के सीखने की प्रक्रिया के मुख्य आयाम एवं चरण क्या होते हैं ? एवं सीखने की प्रक्रिया का सिखाने के तरीकों से क्या सम्बन्ध है ? यह कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिन पर हमें एक शिक्षक के रूप में समझ बनानी चाहिए।

सीखने से जुड़े तीन मुख्य सिद्धान्त –

जब भी हम यह कहते हैं कि हम सीख रहे हैं, उस प्रक्रिया में सबसे अहम् भूमिका हमारे मन–मस्तिष्क की होती है। मन–मस्तिष्क सीखने वाले के अन्दर होता है, यानि सीखना असल में बच्चे या सीखने वाले के भीतर होने वाली घटना है। यह सीखना प्रत्येक बच्चे के अन्दर होता है ना कि एक कक्षा, समूह या उपसमूह में। मोटे–मोटे तौर पर सैद्धांतिक दृष्टि से बाल–केन्द्रित शिक्षण का यही आशय है कि अवश्य ही बच्चा किसी सहायककर्ता की सहायता से अपने से बड़े किसी व्यक्ति के मार्गदर्शन से या फिर किसी समूह के सहयोग से बाह्य वातावरण से अन्तर्क्रिया करने के माध्यम से सीखता है, परन्तु यह सीखना उसके मन–मस्तिष्क के भीतर घटित होता है। अतः सीखने के लिए सीखने वाले की सक्रियता एवं संलग्नता सबसे आवश्यक शर्त है। यह सीखने वाले की सक्रियता, संलग्नता व भागीदारी ही है जिसके आधार पर सीखना घटित होता है। इस बात पर सभी मत एवं सिद्धांत सहमत हैं। यदि सीखने वाला सक्रिय नहीं है जबकि बाहर विचार, गतिविधियाँ, उद्दीपन उपलब्ध हों तो भी सीखना नहीं हो सकता।

सीखने के लिए सीखने वाले के मन–मस्तिष्क को बाहरी गतिविधियों/उद्दीपनों से अन्तःक्रिया करना आवश्यक है। मूलतः सीखने की इस प्रक्रिया को समर्थन देने वाले तत्त्व या प्रक्रियाएँ होती हैं, जैसे– चर्चा, गतिविधियाँ, सीखने–समझने से सम्बन्धित सामग्री एवं आसपास का वातारण इत्यादि। सीखने की प्रक्रिया हाँलाकि मुख्यतः सीखने वाले की आन्तरिक क्रियाशीलता पर आश्रित है परन्तु वह बाहर होने वाली घटनाओं से अन्तर्क्रिया के माध्यम से होती है। बाहर होने वाली घटनाएँ जब सीखने वाले व्यक्ति को प्रभावित करती है एवं विशिष्ट प्रकार की आन्तरिक प्रतिक्रियाओं को उत्पन्न करती है, तभी सीखना हो पाता है। इस तरह बाहरी तत्त्वों में वातावरण, अनुभव, सिखाने वाला, उसकी सक्रियता एवं क्षमता भी महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं।

सीखने वाला अपने वर्तमान अनुभव, ज्ञान व क्षमताओं के माध्यम से ही सक्रिय होता है। उसकी सक्रियता उसकी क्षमताओं, योग्यताओं, कौशलों पर आधारित होती है। इसके मायने है सीखने वाले की सक्रियता

का स्तर एवं प्रकृति इस बात से तय होते हैं कि सीखने वाला पहले क्या जानता है एवं पूर्व में उसके क्या अनुभव रहे हैं। सीखने वाला किन चीज़ों, प्रक्रियाओं एवं विचारों के प्रति कैसे सक्रिय हो पाएगा या नहीं, अथवा सक्रियता का स्तर कितना होगा यह सब सीखने वाले की वर्तमान योग्यता, अनुभव एवं ज्ञान पर ही निर्भर करता है।

अगर आप ध्यानपूर्वक देखें तो हम इस पूरे कार्यक्रम में तीनों सिद्धांतों की ही बात कर रहे हैं। अगर हम बच्चों या मनुष्यों के सीखने समझने से मुख्य सिद्धांतों एवं संबंधित शोधों को देखें तो लगभग 70–80 वर्षों से सभी इन बातों से सहमत हैं।

- सीखना बच्चे को है और वह प्राथमिक तौर पर बच्चे के ही मन–मस्तिष्क में ही घटित होता है।
- बच्चा बाहरी उद्दीपनों एवं तत्त्वों से सक्रिय अन्तःक्रिया करके सीखता है।
- सक्रियता वर्तमान की क्षमता, सिखाना, कौशल व ज्ञान के प्रयोग पर अपेक्षित होती है।
- जब सीखने वाला नई सूचना एवं अनुभव का अर्थ निर्माण कर लेता है तब अर्थपूर्ण अधिगम घटित होता है।

अतः प्रभावी शिक्षण हेतु यह आवश्यक है कि शिक्षक व सिखाने में मदद करने वाले को बच्चे के वर्तमान ज्ञान/योग्यता स्तर से अंतः क्रिया के लिए, स्वयं को उस जगह जाना होता है या उससे स्वयं को बस एक कदम आगे रखना होता है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि आप आगे तो हैं पर उसके समीप हैं या उसकी (बच्चे की) पहुँच से बाहर नहीं है। तब ही बच्चा आपके माध्यम से अपने वर्तमान ज्ञान व समझ के आधार पर बाहर घटित हो रही बातों के आधार पर अर्थ निर्माण कर सकता है। ये वे नए शैक्षिक लक्ष्य, एवं टॉस्क हैं, क्षेत्र हैं जिन्हें अभी बच्चे द्वारा ज्ञात ज्ञान के रूप में नहीं रखा जा सकता परंतु बच्चे का पूर्वज्ञान उसे यह आधार प्रदान करता है कि वह जल्द ही या अपने ज्ञान निर्माण प्रक्रिया के अगले चरण के रूप में उसे जान एवं समझ सकता है। सरल रूप में कहा जाए तो वो ज्ञान का क्षेत्र है जिससे ज्ञात नहीं कर सकते परंतु यह बच्चे की पहुँच में है।

अतः प्रभावशाली शिक्षण हेतु हमारे सभी प्रयास इन मुख्य सिद्धांतों के साथ संगत होने चाहिए।

यदि हम बच्चों के सीखने में सहायक होना चाहते हैं तो हमें इन आधार वाक्यों को अपने ज़ेहन में रखना चाहिए व इनके बारे में जागरूक रहना चाहिए। यदि हम इससे बाहर कुछ करेंगे, तो वह निरर्थक हो सकता है या उसका लाभ बहुत कम होगा।

अब प्रश्न यह है कि हमारा यथार्थ क्या है? हमारा यथार्थ एवं बाल केन्द्रित शिक्षण का एक ध्रुव बिन्दु यह है कि एक से पाँच तक की कक्षाओं में वर्षों के अनुसार, सभी बच्चों के लिए ज्ञान/उपलब्धि के स्तरों का पाठ्यक्रम निर्धारित होता है। इस पाठ्यक्रम को और भी बाँध देने का सूत्र है, पाठ्यपुस्तकें। अधिकतर शिक्षक पाठ्यक्रम से कम परिचित होते हैं व पाठ्यपुस्तकों को ही पाठ्यक्रम मान लेते हैं। जबकि हम में से कई यह समझते हैं कि पाठ्यक्रम, योग्यताओं व क्षमताओं के वे लक्ष्य हैं जिन्हें बच्चों को अर्जित करना है। इन लक्ष्यों एवं दक्षताओं को हासिल करने के लिए पाठ्यपुस्तकें एक माध्यम हैं, जिनकी सहायता से हमें वे लक्ष्य प्राप्त करना है। पाठ्यपुस्तकें इन लक्ष्यों को प्राप्त करने का बस एक माध्यम मात्र हैं व ऐसे कई माध्यम हो सकते हैं।

पाठ्यपुस्तकें मूलतः सभी बच्चों के लिए इन लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु, विषयवस्तु की एक समान क्रमिक योजना है। उसमें क्या सिखाना व पूछना है, यह प्रस्तुत है। हम जिस कक्षा में कार्य करते हैं, पाठ्य पुस्तकों को पहले पाठ से अंतिम पाठ तक समाप्त करते हैं व अंत में या मध्य में परीक्षाओं के माध्यम से यह जानने की कोशिश करते हैं कि किसने कितना सीखा। यह भी मानकीकृत (Standardized) है जिसमें सभी को एक साथ, एक ही अंतराल में एक जैसे प्रश्न पत्रों द्वारा जाँचा जाता है। क्या सिखाना है, कैसे सीखना–सिखाना है, किसकी मदद से सिखाना है व कैसे जाँचना है, यह सभी मानकीकृत (Standardized) है व सभी के लिए समान है। हमारे एक तरफ सीखने के सिद्धांत है व दूसरी ओर हमारा यह यथार्थ है। हमारे यथार्थ का एक और पहलू यह है कि प्रदेश का आँकड़ा है कि आर.टी.ई एक्ट के आने के बाद आयु अनुरूप प्रवेश की संख्या 5 प्रतिशत से कम है। अगर हम बाकी बचे बच्चों की स्थिति को देखें तो कुछ ऐसी तस्वीर उभर कर आती है कि कक्षा एक के बाद बच्चों के विभिन्न स्तर प्रारंभ हो जाते हैं। कक्षा–2 कोई एक जैसी क्षमताओं व ज्ञान वाले बच्चों की कक्षा नहीं है। उसमें 2–3 तरह के स्तरों के बच्चे हैं। कक्षा पाँच तक आते–आते यह स्तर और भी विविध एवं जटिल हो जाते हैं। यह स्थिति आर.टी.ई. एक्ट आने से पहले से है। यह स्थिति किसी योजना ने नहीं पैदा की है, बल्कि एक योजना आपसे यह माँग कर रही है कि आप इस स्थिति को देखें। उनका वर्तमान ज्ञान व समझ आपके पाठ्यक्रम के संदर्भ में एक जैसा नहीं है। यह समझ की बहुस्तरीय स्थिति है। यहाँ जो मूल बात कही जा रही है वह यह है कि हमारे विद्यालयों में एक स्तर के बच्चे नहीं है, इनके साथ यदि एक जैसा काम मात्र पाठ्यपुस्तकों के अनुरूप सभी के साथ होता है, तो बस वही बच्चे इससे लाभ ले पाऐंगे जो पूर्व की कक्षाओं की दक्षताओं को प्राप्त कर चुके हैं। कुछ बच्चे शायद कुछ सहायता से इस पर कार्य कर भी लें पर कुछ बच्चे लगातार विद्यालय आने पर भी नहीं कर पाएंगे। वे बच्चे रोज़ आते हैं, वे किसी तरह रट कर, कुछ और प्रयासों से बने रहने की पूरी कोशिश करते हैं, समस्त प्रयासों के बावजूद वे

सही मायनों में न सक्रिय हो पाते हैं, न संलग्न हो पाते हैं और ना ही सीखने की प्रक्रिया में खुशी–खुशी जुड़ पाते हैं। ऐसे में, जो बच्चे पीछे हैं, एवं शिक्षक उनके अनुरूप कार्य नहीं कर पा रहे हैं वह मात्र पीछे नहीं रह जाते बल्कि वे बढ़ती कक्षाओं के साथ और पीछे होते जाते हैं। इससे वे स्वयं पर से आत्मविश्वास खो देते हैं। वे ये मानने लगते हैं कि वे नहीं सीख सकते, वे यह भी मानने लगते हैं कि उनमें सीखने की क्षमता ही नहीं हैं। यदि कोई सीखने वाला इस भाव से भर जाए तो वह चाहकर भी सही अर्थों में नहीं सीख सकता।

सीखने में अभिप्रेरणा (Motivation) व सीखने वाले की स्वयं के सीखने के संदर्भ में आत्मछवि सीखने पर बहुत प्रभाव डालती है।

स्कूली प्रक्रिया में सभी बच्चे सीख सकते हैं यदि उन्हें उपयुक्त मदद मिले, पर उसके अभाव में वे असफल हो जाते हैं।

यहाँ यह महत्त्वपूर्ण है कि क्या बच्चे सीखने–सिखाने की प्रक्रिया के केन्द्र में हैं ? इस प्रश्न पर तर्कसंगत रूप से जवाब देने के लिए आपको सिर्फ यहाँ यह देखना है कि क्या आप सीखने के सिद्धांतों से सहमत हैं व अपने विद्यालयों के यथार्थ को उन सिद्धान्तों की रोशनी में देख पा रहे हैं। क्या आपको इनमें कोई असंगति दिखती है? यह प्रश्न उनके लिए है जो पूरे मनोभाव से बच्चों को सिखाने का प्रयास करते हैं, परन्तु वे सभी बच्चों को सफल करने में विफल हो जाते हैं। अतः यह बात की जा रही है कि यदि आपको सही मायनों में पढ़ाना है व बच्चों को सिखाना है, तो यह तभी संभव है जब आप बच्चों के वास्तविक स्तर के करीब जाएँगे।

उसके पास जाने के लिए आपको यह पता होना चाहिए कि कौन सा बच्चा वर्तमान में किस स्तर पर है। यह कल्पना कि कक्षा–5 के सभी बच्चे कक्षा–5 के स्तर के हैं, हमारे सीखने–सिखाने की प्रक्रिया का आधार नहीं हो सकता। आपको कक्षाओं में अपेक्षित पाठ्यक्रम द्वारा प्रस्तावित अवधारणाओं व दक्षताओं के प्रस्तावित सोपानों के संदर्भ में बच्चों की वास्तविक स्थिति का पता होना चाहिए। किसी भी पाठ्यक्रम में प्रस्तावित अवधारणाओं के सोपानों में कुछ ऐसी अवधारणाएँ होती हैं, जिन्हें बिना सीखे आगे के स्तर प्राप्त नहीं किए जा सकते। अतः पाठ्यक्रम में जहाँ भी इस प्रकार के सोपान (Hierarchy) हैं, वहाँ शिक्षक के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि वे यह जानें कि वे जिन बच्चों के साथ काम कर रहे हैं, वे किन स्तरों पर हैं, और यदि वे अलग–अलग स्तरों पर हैं, तो एक जैसा कार्य उनके बीच अंतर को और बढ़ाएगा फलस्वरूप जो पीछे हैं, वे और पीछे होते जाएंगे।

अतः ऐसे में सबके के लिए एक योजना व एक विधा की युक्ति कार्य नहीं करेगी।

हमारा यथार्थ एवं आकलन की भूमिका

अतः इस दृष्टि से आकलन बहुत महत्त्वपूर्ण है। शिक्षक को अपनी कक्षा के सभी बच्चों की शैक्षिक स्थिति पता होनी चाहिए तभी वे इस हेतु उपयुक्त योजना बना पाएंगे।

यदि आप सही मायनों में बच्चों के स्तरों को जानते हुए सीखने के सिद्धांतों के अनुरूप चलेंगे तो पाएंगे कि बच्चों की सक्रियता व मनोबल में बहुत सकारात्मक अंतर आएँगें। यदि उन्हें उनके स्तर का कार्य मिलता है तो वे उसे कर पाएँगे व इसके फलस्वरूप हर्ष का अनुभव भी करेंगे। हमारी यह मूल मान्यता है कि सभी बच्चों में सीखने की क्षमता है व सीखने से प्रसन्न होते हैं।

जब शिक्षक बच्चों के अनुसार उनकी स्थिति को आकलित करते हुए अपने सिखाने के कार्य का नियोजन और विधा का निर्धारण करते हैं यही सीसीपी व सीसीई का सही स्वरूप है।

इस दृष्टि से अगर देखें तो यह स्पष्ट होगा कि सीसीई व सीसीपी गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए ही है।

मूल बात यह है कि इस यथार्थ को समझते हुए हमें अपने अंदर यह विश्वास पैदा करना होगा कि यदि उपयुक्त सहयोग या वातावरण मिले तो कोई बच्चा असफल नहीं हो सकता।

सीखने की प्रक्रिया में सीखने वाला किन चरणों से गुज़रता है।

जब भी बच्चे कुछ नया सीखते हैं तो उस प्रक्रिया में कुछ चीजें ऐसी होती है जो बच्चा बिना सहायता से कर सकता है। कुछ ऐसे कार्य हैं जो यदि कितनी भी मदद मिले, बच्चा नहीं कर पायेगा। एक यह स्थिति है जिसमें कुछ मदद से बच्चा नया कार्य कर सकता है।

यदि 1 और 2 पर कार्य करवाया जाता रहे तो ज्यादा सीखना नहीं हो सकता। जब हम सीखने या विकास के समीपवर्ती क्षेत्र जैसा कि पहले बात की गई है पर कार्य करते हैं, यहाँ से शुरू करते हैं तो वह उसे कुछ मदद के बाद स्वयं करने लगता है। यह क्रम लगातार चलता रहता है।

सीसीई के जिन दस्तावेज़ों की बात की जा रही है, वह यही जानकारी देते हैं कि पाठ्यक्रम में प्रस्तावित प्रमुख आयामों के सापेक्ष बच्चों के क्या स्तर हैं। जिसके आधार पर यह निर्णय लिया जा सके कि बच्चों के साथ क्या करवाया जाए व कार्य के उपरांत व दौरान वे किस तरह आगे बढ़ रहे हैं। इसके अनुरूप लगातार आकलन करते हुए उनके साथ उपयुक्त कार्य नियोजन करने में हम शिक्षक स्वयं को सक्षम बना पाएं।

बच्चे को समझें

चूंकि पाठ्यचर्या ''बच्चों'' के लिए बनाई जाती है, और वे ही इससे अंततः लाभ पाने वाले हैं, यह आवश्यक बन जाता है कि हम समझें कि प्राथमिक अवस्था में बच्चा कैसा है, उसकी प्रकृति और स्वरूप क्या है। बच्चे की क्या आवश्यकताएँ और रुचियाँ हैं? वह शारीरिक और मानसिक रूप से क्या–क्या करने में सक्षम है, और क्या–क्या करने में मुश्किल महसूस करता है ? इन सवालों के जवाब हमें प्राथमिक स्तर के बच्चों के गुणों को पहचानने में मदद करते हैं और इन्हीं गुणों को पाठ्यचर्या का ढांचा बनाते समय ध्यान में रखना आवश्यक है।

इस अध्याय में हम बच्चों की विशिष्ट ज़रूरतों को पहचानने की कोशिश करेंगे। इसके लिए हम निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर खोजेंगे –

- **प्राथमिक स्तर पर बच्चे की क्या प्रकृति/स्वरूप है ?**
- **वह क्या है जो बच्चे को एक–दूसरे से भिन्न बना देता है ?**

प्राथमिक चरण के बच्चे की क्या प्रकृति होती है ?

हर बच्चा एक–दूसरे से अलग है – पसंदगी–नापसंदगी में, रुचियों, क्षमताओं, कौशलों और व्यवहार में। इसके साथ ही, यह भी सच है कि विकास का एक निर्धारित साक्रम है और कुछ गुण सामान्य रूप से एक उम्र समूह के बच्चों में पाये जाते हैं। शैशवावस्था में शिक्षा (ईसीई) और प्राथमिक शिक्षा की आयु अवधि यानी 3 से 11 वर्ष, को विकास क्रम के दो प्रमुख चरणों में बांटा जा सकता है। ये हैं –

चरण	आयु	कक्षायें	स्तर
1.	तकरीबन 3 से 7 वर्ष	ईसीई 1 और 2	I
2.	तकरीबन 7 से 11 वर्ष	3, 4 और 5	II और III

अगर हम आंगनबाड़ी के साथ–साथ प्राथमिक कक्षाओं वाली किसी शाला में जायें, तो हम खुद देख सकेंगे कि 3 से 7 वर्षीय बच्चों और 7 से 11 वर्षीय बच्चों में बहुत अंतर है – उनके व्यवहार और अलग–अलग परिस्थितियों में उनकी प्रतिक्रियाओं के रूप में। परंतु दोनों ही चरणों में व्यक्तिगत भिन्नता के बावजूद, बहुत सारी समानताएं भी होंगी।

आइए देखें कि इन दोनों चरणों पर आम रूप से बच्चे किस तरह के होते हैं।

* साभार : एनसीईआरटी–1998, शिक्षा के पहले कदम

विकास का क्रम

चरण–1 (3 से 7 वर्षीय बच्चे)	चरण–2 (7 से 11 वर्षीय बच्चे)
शारीरिक	
बच्चा बहुत सक्रिय और ऊर्जावान है लेकिन उसकी हड्डियों और मांसपेशियों का अभी भी विकास हो रहा है। इसलिए वह एक बार में 10–15 मिनट से ज्यादा स्थिर बैठ नहीं पाता है और उसे विविध हड्डियों के प्रकार की गतिविधियों की जरूरत है जिसमें शरीर की अवस्था (पोज़िशन) में बार–बार बदलाव हो जैसे घर के अंदर/बाहर की गतिविधियाँ, शोरगुल/शांति वाली गतिविधियाँ।	बच्चा अभी भी ऊर्जावान है लेकिन अब ज्यादा देर तक एक ही अवस्था में रह सकता है।
शरीर के अधिक भागों से संबंधित हरकतों का अभी भी विकास हो रहा है। हाथ, कलाई, अंगुलियों की बारीक मांसपेशियों पर नियंत्रण और हाथ व आंख के तालमेल का भी अभी विकास हो रहा है।	हाथों, कंधों, कलाई की मांसपेशियों पर नियंत्रण तथा हाथ और आंख का तालमेल तेजी से बढ़ता है, और यह इसमें झलकता है कि बच्चा अब कुशलता से लिख सकता है, चित्र बना सकता है और उनमें रंग भर सकता है, सिलाई कर सकता है, आदि।
इसलिए बच्चे की आवश्यकता है कि बड़ी मांसपेशियों के विकास के लिए खेल और ऐसी गतिविधियों के मौके मिलें जिनमें दौड़ना, कूदना, संतुलन बनाना आदि शामिल हो। आंख और हाथ के तालमेल के लिए चित्र बनाना और रंग भरना, मिट्टी के खिलौने बनाना आदि के मौके हों।	अब बच्चा वह हरकतें कर सकता है जिनमें बेहतर शारीरिक नियंत्रण शामिल है, जैसे दौड़ना, कूदना, संतुलन बनाना, साइकिल चलाना, रस्सी, कूदना आदि। वह नाच भी सकता/ती है, यह दर्शाते हुए कि मोटी और बारीक शारीरिक हरकतों पर अब बेहतर नियंत्रण है। इस चरण पर बच्चे अपने नये कौशलों का प्रदर्शन करना बहुत पसंद करते हैं।
संज्ञानात्मक	
एकाग्रचित्त रह पाने की अविध छोटी है 7 से 15 मिनट के बीच तक की, वह भी इस पर निर्भर है कि बच्चा गतिविधि में कितनी रुचि ले रहा है।	एकाग्रचित्त रह पाने की अवधि अब और लंबी और बच्चा अब बैठ ही नहीं सकता बल्कि ज्यादा देर तक ध्यान केंद्रित रख सकता है।
बच्चे को जो प्रतीत हो रहा है, उसके द्वारा उसकी सोच/चिंतन/समझ नियंत्रित – दूसरे शब्दों में, बच्चा जैसा देखता है वैसा सोचता है।	तर्क करने और सोचने की क्षमता का विकास तो होता है, लेकिन अभी भी वह ठोस परिस्थितियों तक ही सीमित है।
उदाहरण के लिए अगर 5 पेंसिलों को दूर–दूर रखा हुआ है, व पांच और पेंसिलों को पास–पास, संभावना है	उदाहरण के लिए गणित की अवधारणाएँ बेहतर समझी जायेंगी अगर उन्हें प्रत्यक्ष वस्तुओं और

चरण–1 (3 से 7 वर्षीय बच्चे)	चरण–2 (7 से 11 वर्षीय बच्चे)
कि इस चरण का बच्चा कहेगा कि दूर–दूर रखी हुई पेंसिलें ज्यादा हैं। उसे वे सिर्फ इसलिए ज्यादा लगती हैं क्योंकि वे ज्यादा जगह घेरे हुए हैं।	अनुभवों के ज़रिये परिचित कराया जाये इसकी अपेक्षा कि श्यामपट्ट या पाठ्यपुस्तक में प्रतीकों के माध्यम से।
इस चरण में बच्चों को यह समझने में मुश्किल हो सकती है कि चीजों को बनाया, बदला और फिर से बनाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में बच्चा अभी भी ''संरक्षण'' कर पाने की क्षमता को विकसित करने की प्रक्रिया में है। उदाहरण के लिए अगर आप बच्चे की गीली मिट्टी की एक गेंद दिखायें फिर उसे खींच कर लंबी आकृति दे दें, तो शायद बच्चा यह न समझे कि मिट्टी की मात्रा अभी भी उतनी ही है सिर्फ उसकी आकृति बदल गई है। इस चरण में यह सीमा गणित व विज्ञान की मूल अवधारणाओं को समझना मुश्किल बना देती है।	बच्चा अब समझ सकता है कि वस्तुओं की 'मात्रा', वजन या संख्या उनकी आकृति या जगह के हिसाब से जमावट बदल देने से बदल नहीं जाती। इस चरण में (ऊपर दिए गये) पेंसिलों के उदाहरण में बच्चा अब आत्मविश्वास के साथ बता सकता है कि संख्या बराबर रहती है, हालांकि एक जमावट ज्यादा जगह घेरे हुए है। दूसरे शब्दों में अब बच्चे के पास संरक्षण कर पाने की क्षमता है। यह विकास में एक महत्त्वपूर्ण कदम है जो बच्चों को जोड़, घटाव, गुणा और भाग जैसी मानसिक संक्रियाओं को सीखने के लिए तैयार करता है। बच्चा अब समझ सकता है कि ये प्रक्रियाएं प्रतिक्रम्य हैं, यानि इनको उलटना संभव है, जैसे जोड़ और घटाव एक–दूसरे के विपरीत या उलटे हैं।
बच्चा एक बार में किसी वस्तु के एक ही पहलू पर ध्यान केंद्रित कर सकता है। उदाहरण के लिए अगर बच्चे को मोतियों/मनकों से भरी एक कटोरी दी जाये और कहा जाये कि लकड़ी वाले लाल मोतियों को प्लास्टिक वाले हरे मोतियों से अलग किया जाये तो वह भ्रमित हो सकता है। क्योंकि एक बार में वह या तो रंग पर ध्यान दे सकता है या बनावट पर। बच्चे समझ सकें, इसलिए इस चरण पर अवधारणाओं का एक–एक कर के ही परिचय कराना चाहिए।	बच्चे एक बार में एक से अधिक अवधारणाओं पर काम कर सकते हैं और वस्तुओं का कई तरीकों से समूहीकरण कर सकते हैं, अलग–अलग गुणधर्मों के आधार पर जैसे रंग, आकृति, आकार, सतह आदि।
इस चरण में बच्चा अपने ही दृष्टिकोण से देख सकता है किसी और के दृष्टिकोण से नहीं। यह इसलिए क्योंकि बच्चे के पास अभी तक दूसरे व्यक्तियों और उनके अनुभवों के बारे में ज्ञान और संपर्क है। अगर कहानी सुनाई जा रही हो तो इस चरण के बच्चों	इस चरण तक बच्चे में दूसरे का दृष्टिकोण देखने की क्षमता विकसित हो चुकी है और वह उस पर उचित प्रतिक्रिया दे सकता है। बच्चा व्यक्तिगत अनुभवों से बढ़ कर सामान्य सिद्धांतों तक जा सकता है, यानी वह सार्थक ढंग से अपने अनुभवों को उस

चरण–1 (3 से 7 वर्षीय बच्चे)	चरण–2 (7 से 11 वर्षीय बच्चे)
को ध्यान से देखिए। कई बार वह रोक कर ऐसी चीजें कहेगा जो उससे जुड़ी नहीं हो और अप्रासंगिक अनुभवों को सामने रखेगा।	परिस्थिति से जोड़ सकता है जिसकी चर्चा की जा रही है। इस विकास से वह एक बड़ा कदम आगे लेता है, जिससे बच्चे को विश्लेषण करने, तार्किक संबंधों को देखने व समझने में मदद मिलती है।
अपने आसपास बोली जा रही भाषाओं को बच्चा तेजी से पकड़ सकता है और वह एक बार में एक से अधिक भाषाएँ सीख सकता है। उसका शब्दकोश बराबर गति से बढ़ता रहता है और क्रियाओं से शब्दों की ओर बदलाव स्पष्ट रूप से नज़र आता है। परन्तु बच्चों को दूसरों से बात करने और अच्छी भाषा सुनने के बहुत सारे मौके चाहिए।	अगर सही मौके, अनुभव और प्रोत्साहन मिलें तो बच्चा समझ के साथ सुनने, बोलने, पढ़ने और लिखने जैसे महत्त्वपूर्ण कौशल विकसित करता है।
संगीत, तुकबंदी और ताल पर बच्चों की स्वतःस्फूर्त प्रतिक्रिया होती है। स्वाभाविक है कि जिन बच्चों को वर्णमाला और संख्याएँ कविताओं और गीतों के जरिए सिखाई जाती हैं वे ज्यादा तेजी से सीखते हैं।	संगीत और ताल पर स्वतःस्फूर्त प्रतिक्रिया जारी रहती है। वह गीतों, कविताओं में आनंद लेता है, और उनके शब्दों पर भी प्रतिक्रिया देता है।
इस चरण में बच्चे को खेल बहुत प्रिय है। उसे कल्पनात्मक खेल में मज़ा आता है जिसमें अन्यों (जैसे माता–पिता, शिक्षकों, डॉक्टर आदि) की नकल उतारनी हो। बच्चा पर्यावरण से किसी भी वस्तु का प्रयोग करता है (जैसे कि डॉक्टर के स्टेथोस्कोप की जगह एक छोटी लकड़ी), उस स्थिति के लिए जिसका अनुभव किया जा चुका है। ऐसे खेल बच्चों को अपनी नकारात्मक भावनाओं या तनावों को दूर करने और भावनाओं को व्यक्त करने का मौका देते हैं, अपनी सामाजिक भूमिका व संबंधों को समझने का मौका देते हैं।	इस चरण में भी बच्चे को खेल बहुत प्रिय है, लेकिन अब खेल का स्वरूप ज्यादा परिपक्व और व्यवस्थित है, एक सुनियोजित परिणाम की ओर बढ़ते हुए, जैसे घर के अंदर या बाहर आम खेले जाने वाले खेल जो नियमों पर आधारित हों – पिट्ठू, क्रिकेट, थ्रो–बॉल, फुटबाल, हॉकी, खो–खो, कंचे, मिट्टी, साँप–सीढ़ी, लूडो आदि।
बच्चा जिज्ञासु है, हर चीज़ के बारे में 'क्या', 'क्यूं', 'कैसे' जानना चाहता है। बहुत सारे सवाल पूछता है, जिनका जवाब नहीं मिलने पर उसकी उत्सुकता कम होने की संभावना है।	अगर पहले चरण में हतोत्साहित नहीं किया गया तो बच्चे का जिज्ञासु बने रहना जारी रहता है। इसलिए इस जिज्ञासा को बनाये रखने और विकसित करने के लिए उसे एक उत्तेजना प्रदान करने वाला माहौल चाहिए।

चरण–1 (3 से 7 वर्षीय बच्चे)	चरण–2 (7 से 11 वर्षीय बच्चे)
इस चरण में बच्चे की स्वाभाविक प्रकृति होती है कि वह प्रयास और गलती द्वारा अपने पर्यावरण में गुणधर्मों, पैटर्नों (प्रतिमानों) और संबंधों की खोजबीन करे।	पर्यावरण की खोजबीन में आनंद जारी। वह अब प्रयोग कर सकता/ती है, तार्किक कौशलों का प्रयोग कर सरल/साधारण समस्याओं को हल कर सकता है और ऐसा कर पाने से दक्ष होने/उपलब्धि का भाव महसूस करता है।
कक्षा के अंदर और बाहर की गतिविधियों के संचालन में इस उम्र के बच्चों को शिक्षक के मार्गदर्शन की ज़रूरत होती है।	अब बच्चा विशिष्ट परिणामों की ओर बढ़ने वाली गतिविधियों की सफलतापूर्वक योजना बना सकता है। उनका संयोजन कर सकता है, दूसरे बच्चों के साथ काम करते हुए, जिसमें शायद उसे शिक्षक से थोड़े ही मार्गदर्शन की आवश्यकता पड़े।
सामाजिक–भावनात्मक	
बच्चा खिलौनों, साधारण पज़ल (बुझौवल), ब्लॉक और एकदम आसपास के पर्यावरण की वस्तुओं से खेलना पसंद करता है। उसे गीतों, कहानियों, तुकबंदियों, शिशुगीतों, कठपुतलियों से खेलने, मुखौटों से खेलने आदि में आनंद आता है। पशु कथाएँ, हास्यपद कहानियों, हास्यास्पद घटनाएँ कविताएँ उसे प्रिय हैं। उदाहरण– मोटा लाला बहू को लेकर गिर पड़ा।	बच्चे को ज्यादा जटिलता वाले खिलौनों से खेलना पसंद है, जिन्हें तोड़ा–जोड़ा जा सकता है। बच्चे को कहानियों में आनंद आता है लेकिन दुस्साहसी कारनामों वाली कहानियों में और भी ज्यादा। वह नाटकों में खुद भाग लेना भी पसंद करता है।
बच्चे को दोहराने में मजा आता है, और कभी–कभी वह उन्हीं कहानियों, गीतों, तुकबंदियों, लतीफों/ घटनाओं को बार–बार सुनना पसंद करता है।	बच्चा हास्य का आनंद अभी भी लेता है लेकिन शब्दों से ज्यादा, उदाहरण के लिये हास्यास्पद तुकबंदियाँ आदि। इस चरण में विविधता पसंद करता है।
इस चरण में बच्चे की स्वतःस्फूर्त प्रतिक्रिया होती है। प्रेम या सराहना या आलोचना पर तुरंत उसकी प्रतिक्रिया होती है। शारीरिक रूप से उसे तसल्ली दिलाना–पीठ थपथपाना, छूना, हाथ पकड़ना, उसे सुरक्षा व आत्मविश्वास दिलाना।	बच्चे अब सामाजिक रूप से वांछनीय तरीकों में प्रतिक्रिया व्यक्त करने के बारे में ज्यादा सोचते हैं। वे अभी भी दूसरों का ध्यान और समर्थन/अनुमोदन चाहते हैं, लेकिन शाब्दिक/मौखिक रूप से ज्यादा। भावनाओं के शारीरिक प्रदर्शन से वे थोड़ा शर्माते हैं, शिक्षक का अनुमोदन हर समय चाहते हैं, और उसे अपनी भूमिका के लिए मॉडल मानते हैं।
पहले–पहले बच्चे अकेले या जोड़ों में खेलते हैं, धीरे–धीरे वे छोटे समूहों में खेलने में रुचि विकसित करते हैं। लड़के और लड़कियाँ सामान्यतः एक साथ	इस चरण में मित्र बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं। परन्तु इस चरण में लिंग भेद आने लगता है । हम देखते हैं कि लड़के सिर्फ लड़कों के साथ ही खेलना चाहते

चरण–1 (3 से 7 वर्षीय बच्चे)	चरण–2 (7 से 11 वर्षीय बच्चे)
खेलते हैं।	हैं और लड़कियाँ, लड़कियों के साथ। अगर हम पायें कि कोई लड़का किसी लड़की की चीजों को छूना तक न चाहे या कोई लड़की कहे कि, ''मुझे लड़के नहीं पसंद, वह सिर्फ मेरे सहपाठी हैं, दोस्त नहीं।'' तो हमें अचरज नहीं होना चाहिए।

हालांकि बच्चों के बीच बहुत समानताएं हैं, जैसा कि पहले कहा गया है हमें यह भी याद रखना चाहिए कि एक आयु समूह या विकास के चरण के अंदर, हर बच्चा दूसरे से भिन्न है। यहां तक कि एक ही परिवार में पैदा हुए दो भाई या बहन हर तरह से एक – जैसे नहीं होते हैं। इसलिए किन्हीं भी दो बच्चों की तुलना नहीं करनी चाहिए क्योंकि सभी बच्चे अपने आप में अलग–अलग हैं।

वह क्या है जो बच्चों को एक–दूसरे से भिन्न बनाता है?

हर बच्चे के एक–दूसरे से अलग होने के प्रमुख कारण ये हैं –

- जिसे लेकर हम शुरुआत करते हैं, यानी जो विरासत में जैविक रूप से अपने माता–पिता से पाते हैं।
- रास्ते में उनके साथ क्या गुज़रता है, यानी बड़े होते समय उनका पर्यावरण अनुभव।

हालांकि सहूलियत के लिए जैविक और परिवेशीय प्रभावों को आम तौर पर अलग–अलग देखा जाता है, यह समझना आवश्यक है कि बच्चे का व्यक्तित्व प्रकृति और पोषण दोनों की अंतरक्रिया का परिणाम है, और इन दोनों प्रभाव समूहों को अलग–अलग नहीं किया जा सकता है। परंतु ऐसा ज़रूर है कि कुछ गुण जैविक कारकों द्वारा ज्यादा निर्धारित होते हैं और कुछ परिवेशीय कारकों द्वारा। उदाहरण के लिए बच्चों के विकास के चरण जैविक या परिपक्वता द्वारा निर्धारित होते हैं। जैविक कारकों में भी कुछ गुण वंशानुक्रमिक कारकों द्वारा निर्धारित होते हैं जैसे कि आंखों या बालों का रंग। मानसिक क्षमताएँ, व्यक्तित्व या स्वभाव संबंधी गुण, जो ज्यादा जटिल गुण होते हैं, उन्हें तय करने में जैविक व परिवेशीय, दोनों प्रकार के कारकों के बीच अंतरक्रिया का प्रभाव नजर आता है।

हमारे देश की विस्तृत विविधता – सामाजिक–आर्थिक, सांस्कृतिक व भौगोलिक – को देखते हुए, यह समझना आवश्यक है कि बच्चे के पर्यावरण में वे कौन से कारक हैं जो यह तय करते हैं कि बच्चा किस रूप में विकसित होगा। इससे हमें यह समझने में मदद मिलेगी कि सभी बच्चों से एक ही तरह का बर्ताव करने या एक जैसी उपलब्धि हासिल करने की अपेक्षा करना किस तरह उचित नहीं है।

यह देखने के लिए कि बच्चे के पर्यावरण में वह क्या है जो उसके व्यक्तित्व के विकास को प्रभावित करता है, हम यह मान सकते हैं कि पर्यावरणीय प्रभाव बड़े हो रहे बच्चे को दो परतों में घेरे हुए हैं। ज्यादा आसानी से दिखने वाली परत है उसके एकदम आसपास के परिवेश की, यानी घर, शाला, उसकी आयु समूह के बच्चे, परिवार, मोहल्ला, आदि। इनमें से हरेक का प्रभाव भी तीन पहलुओं में होता है –

- बच्चे को उपलब्ध भौतिक जगह और सामग्री।

- जो उनके आसपास हैं, उनकी सामाजिक भूमिकाएं व उनके साथ संबंध।
- बच्चे की खुद की गतिविधियाँ और जिन तरीकों से बच्चा अपने समय का उपयोग करता है।

पर्यावरणीय प्रभावों की दूसरी परत (जिसमें पहली परत भी शामिल है) में हैं –

- भौगोलिक और भौतिक पर्यावरण।
- ज्यादा व्यापक वह संस्थानात्मक पृष्ठभूमि जिसमें बच्चा पैदा हुआ है और जिस सामाजिक वर्ग, जाति, सांस्कृतिक या भाषिक समूह के हिसाब से उसे पाला–पोसा गया है।
- और इस पृष्ठभूमि के तहत उसे उपलब्ध सामान्य सेवाएं और सुविधाएं।

बच्चे को मिली जैविक विरासत के साथ मिलकर यह सारे कारक बच्चे के विकास को इन मायनों में प्रभावित करते हैं –

- बच्चे का स्वास्थ्य और पोषण का स्तर।
- बच्चे का मानसिक विकास और सीखने की उसकी क्षमता व शैली।
- व्यक्तित्व संबंधी गुण, जैसे आत्म–विश्वास, नेतृत्व, संप्रेषण क्षमता, पहल ले पाने की क्षमता, आदि।
- अभिवृत्तियाँ व मूल्य।

इसका परिणाम यह है कि हम लड़कों और लड़कियों के बीच, अलग–अलग सामाजिक समूहों, आंचलिक समूहों और जातियों के बच्चों के बीच, और हर समूह के अंदर भी अंतर पाते हैं।

हम सीखने में बच्चों की मदद कैसे कर सकते हैं

हालांकि अलग–अलग चरणों के बच्चों की अलग–अलग ज़रूरतें, क्षमताएं व रुचियाँ होती हैं जिन्हें उनके लिए सीखने के अनुभवों की योजना रचते समय ध्यान में रखना ज़रूरी है, फिर भी यह जानना भी महत्त्वपूर्ण है कि बच्चे वास्तव में कैसे सीखते हैं। यह इसलिए भी ज़रूरी है क्योंकि, जैसा कि हम सब जानते हैं, शिक्षकों द्वारा जो 'पढ़ाया' जाता है और बच्चे जो वास्तव में 'सीखते' हैं, उनके बीच एक बहुत बड़ी खाई है। उनके सीखने की प्रक्रिया की समझ हमें इस खाई को कम करने और उनके अधिगम में बढ़ोत्तरी लाने में मदद करेगी। आइए देखें कि किन तरीकों से बच्चे बेहतर सीखते हैं –

- बच्चे बेहतर सीखेंगे जब उनका 'नया अधिगम' उनके 'पूर्व अधिगम' पर आधारित हो। बच्चे जब शाला आते हैं तो वे किसी साफ़ स्लेट की तरह नहीं होते बल्कि अनुभवों का एक भंडार ले कर आते हैं। यह भंडार मात्रा व गुणवत्ता के हिसाब से हर बच्चे में भिन्न–भिन्न हो सकता है। तय किये गये अधिगम अनुभवों की योजना इन्हें ध्यान में रखकर बननी चाहिए। साथ ही, शाला आते समय उनके पास के विविध अनुभवों व ज्ञान के स्तरों को स्वीकारना चाहिए, उनका आदर होना चाहिए, ताकि उनके पास आत्मविश्वास व आत्मसम्मान रह सके।
- बच्चे खुद अपने ज्ञान की रचना करते हैं और सिर्फ़ सीधे–सीधे उन्हें दिए गए ज्ञान को आत्मसात नहीं करते हैं। इसलिए हरेक बच्चा किसी नई दी गई जानकारी को अपने पूर्व के आधार पर अपना अर्थ देता है, और खुद अपने निष्कर्षों व समझ पर पहुंचता है।
- अगर अधिगम गतिविधियों में एक से अधिक ज्ञानेन्द्रिय का प्रयोग किया जाये तो बच्चे बेहतर सीखेंगे। ज्ञानेन्द्रियों के लिए उत्तेजना के मौके (सूंघना, छूना, चखना, सुनना व देखना) विविध प्रकार के अनुभवों द्वारा दिये जाने की आवश्यकता है।
- बच्चों का सीखना शाला की चारदिवारी में बिताये गये समय तक ही सीमित नहीं है। यह एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है जो हर समय, हर जगह होती रहती है – घर, कक्षा और खेल के मैदान में तथा उसके आगे भी। इसलिए कक्षा में हो रहे शिक्षण का बच्चे के पर्यावरण से जुड़ना आवश्यक है।
- बच्चे सिर्फ शिक्षक से ही नहीं बल्कि दूसरे बच्चों के साथ अंतरक्रियाओं द्वारा भी सीखते हैं और इसलिए उन्हें अपने आयु समूह के बच्चों के साथ सहयोगी क्रियाएं करके, सीखने के मौके दिए जाने चाहिए।
- बच्चे बेहतर सीखते हैं अगर उन्हें अपनी ही गति से सीखने दिया जाये। यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि सभी बच्चे एक बराबर गति से सीखेंगे। इसलिए बच्चों को सीखने के वास्ते समय देने और अपेक्षाओं को तय करने में लचीलापन बहुत महत्त्वपूर्ण है।
- बच्चे समग्र रूप में सीखते हैं, विभाजित या टुकड़ों–टुकड़ों में किये गये रूप में नहीं। इसलिए बच्चे के लिए एकीकृत तरीके द्वारा सीखना कहीं ज्यादा सार्थक होगा, जिसमें एक बार में एक से अधिक दक्षताओं पर एक साथ काम किया जा रहा है, न कि विषयों को अलग–अलग पढ़ाना।

---

* साभार : एनसीईआरटी–1998, शिक्षा के पहले कदम

- बच्चे रेखीय रूप में नहीं सीखते। इसकी अपेक्षा वे एक घुमावदार तरीके (स्पाइरल) से सीखते हैं। उदाहरण के लिए कक्षा में बच्चों को एकल अंकों वाला जोड़ सिखाया गया हो सकता है। पर उनका सीखना बेहतर होगा अगर उन्हें अगली कक्षा में नये अधिगम के साथ–साथ इन अवधारणाओं और कौशलों पर वापिस जाने का मौका मिले ताकि जो सीखा है उसे समेटा जा सके। परन्तु अवधारणाओं पर वापिस जाते समय उनकी जटिलता बढ़ाई जा सकती है ताकि बच्चों की बढ़ी हुई परिपक्वता से मेल खा सके।
- बच्चे बेहतर सीखेंगे अगर उन्हें प्रोत्साहित किया जाये और वे सफलता का अनुभव कर सकें। इसलिए बच्चों की उपलब्धियों के साथ उनके प्रयासों की सराहना की जानी चाहिए। इसलिए कार्यों की योजना ऐसे बने कि उनके लिए चुनौती तो हो, परन्तु उनकी क्षमता के स्तर के अंदर ही हो। ऐसा प्रोत्साहन बच्चे को ज्यादा से ज्यादा सीखते रहने के लिए अभिप्रेरित करेगा।
- बच्चे तब ज्यादा प्रभावकारी ढंग से सीखते हैं जब विषयवस्तु रुचिकर होती है, उन्हें बांध कर रख सकती है व शिक्षण प्रक्रिया आनंददायी होती है, ज्यादा भागीदारी बच्चों को अपने स्तर पर और सोच पाने के लिए मौके देती है।
- बच्चे अनुसरण के द्वारा कई चीजें सीखते हैं। उनके आसपास किस तरह की आदतें व्यवहार में लाई जा रही हैं, इसके आधार पर वे अच्छी या बुरी आदतें और मूल्यों को पकड़ते हैं। इसलिए उन्हें घर अथवा शाला में अच्छे रोल मॉडल या ऐसे वयस्क चाहिए जो उसके लिए आदर्श के रूप में हों।
- बच्चे अपनी संज्ञानात्मक शैलियों में भिन्न–भिन्न होते हैं, और इसलिए उनके सोचने व किसी समस्या पर तर्क द्वारा हल तक पहुंचने के तरीके अलग–अलग होते हैं। जैसे, कुछ बच्चों का स्वभाव ज्यादा विचारशील होता है और वे कोई उत्तर देने या हल के बारे में तय करने के लिए काफी सोचते हैं। दूसरे बच्चे आवेग में आकर तुरंत प्रतिक्रिया देने वाले स्वभाव के होते हैं। इसलिए हमारी यह तैयारी होनी चाहिए कि एक – जैसी स्थितियों में भी बच्चे अलग–अलग तरीके से बर्ताव कर सकते हैं या भिन्न प्रतिक्रिया दे सकते हैं।
- बच्चों का सीखना ठोस से अमूर्त की ओर बढ़ना है, परिचित से अपरिचित की ओर, व विशिष्ट से सामान्य की ओर। इस वजह से बच्चों को ठोस वस्तुओं पर आधारित बहुत सारे अनुभवों व उदाहरणों की आवश्यकता होती है ताकि वे निष्कर्षों, नियमों और सिद्धांतों तक पहुंच सकें।
- प्राथमिक स्तर पर बच्चे दोहरा कर सीखते हैं। इसलिए, अभ्यास व ड्रिल का प्रावधान रखना आवश्यक है ताकि कुछ विशेष कौशलों का विकास हो सके। परन्तु बच्चों को उबाऊ तरीके से दोहराने में मजा नहीं आता। इसलिए दक्षताओं में दोबारा पहुंचते समय अंतर हो।

बच्चे खेलना पसंद करते हैं और इसी वजह से बहुत कुछ खेल के ज़रिये सीखा जा सकता है।

बच्चा और खेल

खेल एक ऐसी चीज है जिसके लिए तो बच्चा मानो पैदा ही हुआ हो। खेल बच्चों के लिए इतना मज़ेदार होता है। कई बार यह माना जाता है कि बच्चा अगर खाना बंद कर दे तो यह चिंता का इतना बड़ा विषय नहीं है, लेकिन जब खेलना बंद कर दे तब ज़रूर है। जिस खेल में बच्चा इतना डूबा रहता है, क्या वह सिर्फ मौज–मस्ती ही है या क्या यह उसके विकास में और बेहतर सीखने में भी मदद करता है?

अगर हम गंभीरता से बच्चों के खेल व खेलने के तरीके को देखें तो पाएँगे कि वह बच्चे के सीखने में एक मूलभूत निर्माण–ब्लाक है। अधिगम के चारों स्तंभों में से हरेक के अंतर्गत पहचाने गए उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए

वह योग देता है। ये चारों स्तंभ हैं – जानना सीखना, करना सीखना, साथ रहना सीखना और खुद हो पाना सीखना।

खेल यह सीखने में भी बच्चे की मदद करता है

- सहयोग करना, दूसरों के साथ बांटना और अपनी बारी का इंतजार करना।
- दोस्त बनाना व दोस्ती को बनाये रख पाना।
- खोजबीन करना, प्रयोग करना और खुद अपनी खोजें करना।
- अपने हाथों का प्रयोग करना व अपने शरीर का ताल–मेल विकसित करना।
- अपने भाषाई कौशलों के अभ्यास करने के मौके तलाशना।
- सफलता व असफलता, दोनों को रचनात्मक रूप से ले पाना।
- सृजनात्मक हो पाने व अपनी कल्पना का प्रयोग करने के मौके तलाशना।
- अपने अंदर के भावों को बाहर आने का मौका देने के तरीके ढूंढ़ पाना और अपनी छोटी–मोटी चिंताओं को सुलझा पाना।
- आत्मविश्वासी व स्वावलंबी बनने की कोशिश करना।

इस तरह खेल हर बच्चे के लिए सिर्फ मूल आवश्यकता ही नहीं, बल्कि उसका अधिकार भी है।

याद रखिए : ऐसा कोई एक ''सही तरीका'' नहीं है जिससे बच्चे सीखते हैं। शिक्षकों के लिए यह आवश्यक है कि वे प्रयोग करें, अलग–अलग विकल्पों को आज़मा कर देखें ताकि वे जान सकें कि किन स्थितियों में क्या प्रभावकारी है।

हर बच्चे की अपनी स्वभाविक रुचि हो सकती है और अगर उसे सही विकल्प दिया जाये, अपने तरीके से सीखने और प्रतिक्रिया करने के मौके दिये जायें तो वह बहुत कुछ कर सकता है। कक्षा में गतिविधियों और सीखने के मौकों में विविधता लाकर बच्चों के अधिगम में वृद्धि लाई जा सकती है क्योंकि इससे हर बच्चे के लिए श्रेष्ठ करने और पाने के मौके बराबर हो जाते हैं।

- बच्चे अलग–अलग तरीकों से बुद्धिमान होते हैं और यह उनके सीखने की शैली को प्रभावित करता है।

हाल में किये गये शोध से यह पता चलता है कि बुद्धि 'अकादमिक' रूप की ही नहीं होती है, जैसा कि परम्परागत ढंग से माना गया है। एक ही नहीं, सात तरह की 'बुद्धि' हो सकती है –

- Musical intelligence / संगीत–संबंधी बुद्धि।
- Interpersonal intelligence / व्यक्तियों के बीच पारस्परिक बुद्धि।
- Kinesthetic intelligence / काइनेस्थेटिक बुद्धि।
- Numerical intelligence / अंक संबंधी बुद्धि।
- Linguistic intelligence / भाषाई बुद्धि।
- Spatial intelligence / जगह की समझ संबंधी बुद्धि।
- Interapersonal intelligence / अंतःव्यक्तित्व संबंधी बुद्धि।

भावात्मक बुद्धि

नई शोध इस बात के बहुत प्रमाण ला रही है कि अगर हम जीवन में सफल होना चाहते हैं तो भावात्मक रूप से बुद्धिमान होना हमें मात्र 'मानसिक रूप से बुद्धिमान' होने से कहीं ज्यादा मदद कर सकता है। और इस भावात्मक बुद्धि के विकास में बचपन के वर्ष बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। पर क्या अर्थ है भावात्मक बुद्धि के विकास का? इसका अर्थ होता है बच्चों में इसके लिए क्षमता का विकास करना –

- खुद के बारे में चेतना : अपनी भावनाओं को पहचानने की क्षमता, और विचारों, भावों व भावनाओं के बीच के संबंध की समझ।
- व्यक्तिगत निर्णय लेना : स्वतंत्र हो निर्णय ले पाने की क्षमता।
- भावों को संभालना : खेल, खेल–संबंधी विश्राम, आदि के द्वारा।
- सहानुभूति, दूसरों से तदनुभूति : दूसरों के भावों, चिंताओं को समझना।
- खुद के बारे में खुलापन : खुलापन रखना, किसी संबंध में विश्वास को जगह देना, साथ ही यह समझना कि कब अपनी भावनाओं के साथ दूसरों पर विश्वास रखा जा सकता है।
- खुद को स्वीकारना : यानी अपने बारे में गौरव महसूस करना, अपने को सकारात्मक रवैये से देखना, अपनी ताकतों व कमजोरियों को पहचानना अपने ऊपर हंस पाना।
- व्यक्तिगत जिम्मेदारी : अपने द्वारा किये गये काम के लिये जिम्मेदारी लेना; अपने उत्तरदायित्वों को निभाना।
- दबंग होना : क्रोध या निष्क्रियता के बिना अपनी चिंताओं और भावों को व्यक्त करना।
- समूह में गतिशीलता : सामूहिक स्थितियों में दूसरों के साथ सहयोग करना, यह समझ पाना कि कब नेतृत्व की ज़रूरत है और कब दूसरों के पीछे हो लेने की।
- विरोध सुलझाना : विरोध की स्थितियों को सुलझा पाने के लिए निष्पक्षता का भाव विकसित करना व उपयोग में लाना।

हालांकि ऐसा लग सकता है कि ये वयस्कों के लिए वांछनीय गुण हैं, किन्तु इनकी शुरुआत जीवन के पहले वर्षों में ही करनी पड़ेगी। इसलिए शिक्षकों व अभिभावकों को इन क्षमताओं के बारे में सचेत होना चाहिए और बच्चों में इनके विकास का प्रयास करना चाहिए।

हमने कोशिश की है उन बच्चों की ओर देखने की जिन्हें हम समझते हैं कि वे प्राथमिक शालाओं में आएँगे, उन बच्चों के लिए हम योजना बना रहे हैं पाठ्यचर्या की और हमने प्रयास किया है उनकी ज़रूरतों को समझने का, प्राथमिक चरण के अलग–अलग स्तरों पर उनके गुण व रुचियों को समझने का।

अब प्राथमिक स्तर पर बच्चे के बारे में इस समझ के साथ, हमें इस पर ग़ौर करने की ज़रूरत है कि हम प्राथमिक विद्यालय के अनुभव के ज़रिये क्या देना चाहेंगे जो उन्हें अभी की ज़रूरतों और आगे की चुनौतियों का सामना करने में मदद करेगा। पर इसके पहले यह महत्त्वपूर्ण है कि हमारे पास एक स्पष्ट चित्र हो कि प्राथमिक शिक्षा के सभी वर्षों के अंत तक हम बच्चे से कैसा बन जाने की अपेक्षा करते हैं।

बाल केन्द्रित शिक्षा : सामान्य उपागम

हम चाहते हैं कि बच्चे सीखें और अपने अंदर की सारी संभावनाओं को विकसित करें। यह कर पाने के लिए यह महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि *कक्षा में सीखने–सिखाने की प्रक्रिया की योजना इस ढंग से बनाई जाए कि वह बच्चों की जरूरतों, ज्ञान, अनुभवों, गुणों और सीखने की शैलियों से मेल खाए।* दूसरे शब्दों में, हमें अपने *शिक्षण को और अधिक बाल–केंद्रित बनाना पड़ेगा।*

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986, 92) ने बच्चों के लिए आनंददायी सीखने का माहौल तथा प्राथमिक स्तर पर सीखने–सिखाने के लिए बाल–केंद्रित व गतिविधि आधारित उपागम अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया है। परन्तु कई बार बाल–केंद्रित व गतिविधि आधारित उपागम की पूरी धारणा को लेकर गलतफहमियां रही हैं, जैसा कि कक्षा के उन चलनों से पता लगता है जिन्हें इससे बढ़ावा मिला।

इस लेख में हम तीन महत्त्वपूर्ण प्रश्नों को संबोधित करेंगे, जो हैं :

- बाल–केंद्रित व गतिविधि आधारित उपागम क्या है?
- बाल–केंद्रित उपागम क्यों आवश्यक है?
- बाल–केंद्रित उपागम को किस तरह व्यवहार में उतारना चाहिए?

बाल–केंद्रित व गतिविधि आधारित उपागम क्या है?

बाल–केंद्रित व गतिविधि आधारित उपागम का अर्थ है कक्षा में शिक्षण के लिए ऐसा उपागम जो कि विशिष्ट तौर पर उन बच्चों की जरूरतों, ज्ञान, अनुभवों, विचारों, क्षमताओं, रुचियों और सामाजिक संदर्भ पर आधारित हो जिनके लिए उसकी योजना बनाई जा रही है। इस उपागम में प्रयोग में लाई जाने वाली विधि मोटे तौर पर कक्षा में बच्चे के लिए सीखने का माहौल बनाने पर आधारित है, जिसके लिए ऐसी गतिविधियों या कार्यों की योजना बनाई जाती है जो आनंददायी हैं और जिनमें *बच्चे द्वारा सक्रिय रूप से सोचना/सीखना* शामिल है। यहां पर शिक्षक की भूमिका दरअसल एक **सुगमकर्ता** की हो जाती है।

इस तरह बाल–केंद्रित उपागम निम्नलिखित सिद्धांतों या मान्यताओं से दिशा लेता है :

- बच्चे अपने अनुभवों और अपने आसपास की दुनिया से अंतरक्रिया के द्वारा अपने ज्ञान की रचना खुद करते हैं।
- शिक्षक व अपने से ज्यादा सक्षम बच्चों के साथ अंतरक्रिया द्वारा बच्चों के अंदर सीखने की संभावनाओं को एक बिन्दु तक बढ़ाया जा सकता है।
- बच्चे के सीखने और समझने में उसके सामाजिक व सांस्कृतिक संदर्भ की प्रमुख भूमिका होती है।
- शिक्षक बच्चों के सीखने और विकास में तब सबसे अधिक मदद करते हैं जब वे अपनी कक्षा के बच्चों की रुचियों, ज्ञान, अनुभवों, विचारों, ज़रूरतों, सीखने की शैलियों और ताकतों को नींव बना उस पर आगे का काम बढ़ाएँ।

---

* साभार : एनसीईआरटी–1998, शिक्षा के पहले कदम

बाल–केंद्रित कक्षा में :

- सीखने–सिखाने की पूरी प्रक्रिया का केंद्र शिक्षक नहीं बच्चा है।
- कक्षा की प्रक्रिया में बच्चा निष्क्रिय नहीं, सक्रिय प्रतिभागी है।
- बच्चे की अपनी कक्षा के दूसरे बच्चों, विविध प्रकार की सामग्री व शिक्षक के साथ अंतरक्रिया के अधिक से अधिक मौके मिलते हैं।
- पाठ्यचर्या और शैक्षणिक सामग्री साध्य न होकर बच्चों के समग्र विकास को बढ़ावा देने के साधन हैं।
- सीखने–सिखाने का लक्ष्य बच्चों को सिर्फ ज्ञान हासिल करने में मदद करना ही नहीं है बल्कि उनके व्यक्तित्व के समग्र विकास को बढ़ावा देना है।
- पाठ्यपुस्तकों पर पूर्ण निर्भरता की जगह, बच्चों के सीखने का माध्यम वे गतिविधियां बन जाती हैं जिनकी योजना शिक्षक बनाता है और जिन्हें बच्चे करते हैं।
- बच्चों की उपलब्धि का आकलन उनकी क्षमताओं पर निर्णय लेने के लिए नहीं बल्कि सीखने के चक्र के एक महत्त्वपूर्ण अंग के रूप में किया जाता है, ताकि उनकी प्रगति की मॉनीटरिंग हो सके व सीखने के नये अनुभवों की योजना बनाई जा सके।
- पढ़ाते समय शिक्षक का लक्ष्य पाठ्यक्रम को पूरा करना कम और यह सुनिश्चित करना अधिक है कि कक्षा के सभी बच्चे सीख रहे हैं।
- कक्षा का माहौल प्रजातांत्रिक, स्नेहिल और आनंददायी है, जिसमें बच्चे सुरक्षित और आत्मविश्वास भरा महसूस करते हैं, और बिना किसी भय के भाग लेते हैं।
- समय में लचीलापन और गतिविधियों व सीखने के मौकों में विविधता है ताकि हर बच्चा अपनी गति और अपनी सीखने की शैली के हिसाब से काम कर सकता है।

बाल–केंद्रित उपागम क्यों आवश्यक है?

एक क्षण के लिए कल्पना करें कि हम किसी प्राथमिक कक्षा में हैं और कक्षा जारी है। हमारे क्या देखने की संभावना है? संभव है कि हम देखें कि एक शिक्षक श्यामपट्ट के करीब खड़ा है, हाथ में चाक रखे, किसी चित्रित या लिखित चीज को समझाता हुआ या पाठ्यपुस्तक से बच्चों को बारी–बारी से पढ़वाता हुआ। या हो सकता है कि वह श्यामपट्ट पर कुछ लिख रहा हो और बच्चों से उसे अपनी स्लेटों या कॉपियों में उतारने के लिए कह रहा हो। अगर यह बहु–कक्षा शिक्षण स्थिति है तो शिक्षक ने शायद एक कक्षा को कुछ लिखित कार्य दे दिया हो और अब वह दूसरी कक्षा को पाठ्यपुस्तक से पढ़ा रहा हो। एक स्थिति में बच्चे निष्क्रिय श्रोता होंगे, जबकि दूसरी दो स्थितियों में वे यांत्रिक रूप से पुस्तक से पढ़ने या लिखने में व्यस्त होंगे। इन सभी स्थितियों में हम देख सकते हैं कि *अधिकांश बच्चों के लिए बहुत कम मात्रा में सक्रिय हो कर सीखना हो रहा है।* अगर हम शिक्षक से बात करें तो संभवतः वह कहेगा कि वह निष्ठापूर्वक पाठ्यक्रम पूरा करने की ओर कार्य कर रहा है, और सभी शिक्षक व उसके पर्यवेक्षक चाहते हैं कि वह यह ही करे ! फिर किधर समस्या है? समस्या यह है कि इन सभी कक्षाओं में *उपागम शिक्षक–केंद्रित है, यानी कक्षा की गतिविधियों का समय, उनकी गति और स्वभाव पूरी तरह शिक्षक के हाथों में है।*

हम सब इस बारे में सचेत हैं कि आम तौर पर हर कक्षा में तीन मोटी श्रेणियों के बच्चे होते हैं – तेजी से सीखने वाले, औसत और तुलनात्मक रूप से धीमे सीखने वाले। अधिकांश बच्चे औसत गति से सीखने वाले समूह में होते हैं। यह पाया गया है कि योजना बनाते समय व क्रियान्वयन के दौरान आमतौर पर शिक्षक औसत

समूह को संबोधित करते हैं। जो बाकी रह जाते हैं, उनमें से कुछ को पहले से ही आता है, कुछ आंशिक रूप से समझते हैं, और कुछ एकदम ही नहीं समझ पाते हैं। समय के साथ जैसे–जैसे शिक्षक एक पाठ से दूसरे की ओर बढ़ता जाता है, *बच्चों के सीखने में यह खाई और बढ़ती जाती है, इस हद तक कि वे नहीं समझ पाने के बोझ से ग्रसित होने लगते हैं।* चूंकि ये बच्चे दूसरों के साथ अपनी गति नहीं बनाकर रख सकते हैं, धीरे–धीरे उनमें शाला के प्रति अरुचि बढ़ने की संभावना है और वे शाला छोड़कर व्यवस्था से बाहर भी हो सकते हैं।

शिक्षक ने जो पढ़ाया है और बच्चों ने जो सीखा है उसके बीच की खाई का एक प्रमुख कारण यह है कि इस प्रकार की कक्षा में बच्चा सक्रिय भागीदार न होकर सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में *मात्र एक निष्क्रिय प्राप्तकर्ता* रहा है। शिक्षक बोलता है और बच्चा सुनता है! यह उपागम बच्चों के सीखने के तरीके से बिल्कुल मेल नहीं खाता। जैसा कि सभी जानते हैं, इस आयु–समूह के बच्चे विकासक्रम के उस चरण में हैं जहां उन्हें *अनुभव करने, सक्रिय होने और करने*, और इस तरह सीखने की जरूरत है। इसके अलावा, जैसा कि अध्याय 2 में उल्लेखित है, अलग–अलग बच्चे *अलग–अलग तरीकों व गतियों से सीखते हैं। शिक्षक–केंद्रित उपागम में इसके लिए कोई भी प्रावधान नहीं है, अतः सीखने वाले और सीखने की प्रक्रिया में मेल नहीं है।*

इसके विपरीत, बाल–केंद्रित उपागम बच्चों की ज़रूरतों से बेहतर मेल खाता है और यह सुनिश्चित करता है कि सीखना केवल ज्यादा सहज, बेहतर, स्थायी और आनंददायी ही नहीं है बल्कि बच्चों के व्यक्तित्व के समग्र विकास की ओर भी ले जाता है।

अनेक अभिभावक, शिक्षक व शिक्षा के क्षेत्र में काम कर रहे कार्मिक कई बार यह मानते हैं कि सीखने–सिखाने में बाल–केंद्रित उपागम वह संरचना प्रदान नहीं करता जो कि सही, गहन व विशिष्ट अधिगम के लिए आवश्यक है। चूंकि अधिगम और क्षमताओं का बच्चों में भावनाओं, रुचियों, भावों व दक्षताओं से करीबी संबंध रहता है, यह पाया गया है कि अधिक बाल–केंद्रित कक्षाओं से निकले बच्चों की अकादमिक क्षमाताएँ उन बच्चों की क्षमताओं से कहीं बेहतर थीं जो पारंपरिक सीखने–सिखाने के चलन वाली कक्षाओं से थे।

शिक्षक–केंद्रित उपागम, या अधिक 'कौशल–केंद्रित' दक्षता–आधारित शिक्षण के विपरीत बाल–केंद्रित उपागम में नाना प्रकार के अनुभवों का प्रावधान है, जो सहायक होते हैं अधिगम के चार स्तंभों की नींव रखने में, यानी

- समझना सीखना
- करना सीखना
- एक साथ जीना सीखना
- पूर्ण होना सीखना

इस बिंदु पर जिस प्रश्न को संबोधित करने की आवश्यकता है, वह है : बाल–केंद्रित व गतिविधि आधारित उपागम के कार्यक्रम की किस तरह योजना बनाई जाए और उसे कक्षा में किस तरह उतारा जाए ताकि वह अपेक्षित निर्गमों की उपलब्धि सुनिश्चित कर सके।

बाल–केंद्रित उपागम को किस तरह व्यवहार में उतारना चाहिए?

सीखना–सिखाना मुख्यतः इनसे प्रभावित है :

1. बच्चा
2. सीखने–सिखाने की प्रक्रिया अपने आप में
3. शिक्षक

यह समझ पाने के लिए बाल–केंद्रित शिक्षा को किस तरह व्यवहार में उतारना चाहिए, आइए इस उपागम को इन तत्वों के संदर्भ में देखें।

बच्चा

यहाँ यह स्मरण करना महत्त्वपूर्ण है कि चरण 1 के बच्चे (3 से 7 वर्ष की आयु) की जरूरतें और गुण चरण 2 के बच्चे (7 से 11 वर्ष की आयु) से बहुत भिन्न होती हैं। इसका तात्पर्य यह है कि सीखने–सिखाने की प्रक्रिया की *योजना बनाते समय इन अंतरों को ध्यान में रखना चाहिए।* हो सकता है कि कम आयु के बच्चे के लिए सीखने के रोचक गतिविधि थोड़े बड़े और परिपक्व बच्चे के लिए इतनी रोचक या चुनौतीपूर्ण न हो। उदाहरण के लिए चरण 1 के बच्चे को मुखौटों और अभिनय द्वारा जानवरों और उनकी ध्वनियों के बारे में सीखने में मजा आ सकता है। चरण 2 के बच्चे को यह 'बचकाना' लग सकता है और वह शायद अपने साथियों के समूह के जानवरों पर एक 'प्रोजेक्ट' तैयार करके अधिक सीख सकता है।

गतिविधि क्या है ?

कई लोग यह मानते है कि गतिविधि सीखने का वह तरीका है जिसमें बच्चे शारीरिक रूप से अपने लिए किसी मजेदार काम में भाग लेते हैं! जैसे कि अभिनय, तुकबंदी और गीत, कठपुतली खेल, मजेदार खेल आदि। ये सब अच्छी अधिगम गतिविधियों के रूप में जरूर काम आ सकते हैं। खतरा यह है कि कई बार इन्हें शिक्षकों द्वारा 'गतिविधि करने के लिए गतिविधि' के रूप में किया जाता है और इसलिए, आनंददायी होते हुए भी, हो सकता है कि वे कुछ विशेष सीखने की ओर न ले जाएं। यह नोट करना महत्त्वपूर्ण है कि एक अच्छी गतिविधि वह है :

- जो शिक्षक द्वारा सुनियोजित अनुभवों की उस कड़ी का हिस्सा है जिसे शिक्षक ने बच्चे के लिए किसी विशेष अधिगम क्षेत्र या क्षेत्रों के लिए चिन्हित किया है, और अपने आप में एक निस्संगत अधिगम अनुभव नहीं है।
- जिसमें बच्चे की भागीदारी निहित है।
- जो बच्चे को 'सक्रिय रूप से सोचने' के लिए बाध्य करती है।
- जिसमें शारीरिक चलन हो या न हो, परन्तु मानसिक कौशलों का प्रयोग अवश्य है, उदाहरण के लिए पहेलियों को हल करना या अपने अनुभवों के बारे में लिखना, पुस्तक में तल्लीन हो उसे पढ़ना, या शब्दकोश को देखना भी गतिविधियाँ है।
- जो बच्चे के लिए पर्याप्त स्तर पर चुनौतीपूर्ण है ताकि अभ्यास करने और कई तरह की स्थितियों में बच्चे को अपने कौशलों व ज्ञान को विविध तरीकों से प्रयोग में लाने में मदद कर सके।

हमें बच्चों के सीखने के उन विविध गुणों को भी अपने मन में रखना चाहिए जो दोनों चरणों के बीच सामान्य हैं। उदाहरण के लिए, यह ध्यान में रखना कि *बच्चे अलग–अलग तरीकों से बुद्धिमान हो सकते हैं,* या वे विभिन्न तरीकों से सीखते हैं, उस शिक्षक के लिए महत्त्वपूर्ण हो जाता है जिसे बच्चों के लिए विभिन्न प्रकार के अनुभवों या गतिविधियों के लिए योजना बनानी है। इसी तरह यह तथ्य कि *बच्चे रेखीय नहीं घुमावदार (spiral) तरीके से सीखते हैं,* शिक्षक के लिए अनिवार्य कर देता है कि वह सामग्री व गतिविधियों द्वारा बच्चों को पहले परिचित कराई गई अवधारणाओं पर दुबारा और बार–बार जाने के मौके दे ताकि समझ और गहरी हो सके।

हालांकि जिन गुणों की चर्चा कर रहे हैं; वे अधिकांश बच्चों में सामान्य हैं, शिक्षक के लिए यह भी आवश्यक है कि वह जिन **विशिष्ट समूहों** को पढ़ा रहा है, उनके वे पहलू ध्यान में रखे जिनके आधार पर तय कर सके कि उसे उनके लिए किस तरह की गतिविधियों या अनुभवों की योजना रचनी है। इन पहलुओं में शामिल हो सकते

हैं – बच्चों की सामाजिक व सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, उनके आसपास का परिवेश, कक्षा में आने के पहले जो अधिगम व अनुभव उनके पास पहले से ही है, उनकी भाषायी पृष्ठभूमि, आदि। जैसा कि सभी जानते हैं, हर कक्षा का चरित्र अलग और बेजोड़ है, और इसीलिए ज़रूरी नहीं कि जो बाल–समूह या शिक्षक के साथ कारगर रहे, वह वैसा ही किसी और समूह या शिक्षक क साथ रहे! इसलिए शिक्षकों में इस तरह की संवेदनशीलता का विकास बहुत ही महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

सीखने–सिखाने की प्रक्रिया

यह समझ पाने के लिए कि बाल–केंद्रित उपागम कक्षा में हो रही सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को कैसे प्रभावित करेगा, यह देखना आवश्यक है कि इस प्रक्रिया के इन विभिन्न पहलुओं के लिए उसका क्या तात्पर्य है :

- योजना बनाना
- सीखने–सिखाने की रणनीतियां
- कक्षा व्यवस्था व प्रबंधन
- समय प्रबंधन
- सीखने–सिखाने के लिए सामग्री
- आकलन

आइए, इन तत्वों को एक–एक कर देखें।

योजना बनाना

बाल–केंद्रित कक्षा के बारे में यह कतई नहीं कहा जा सकता कि 'सब कुछ चलता है' किस्म का कार्यक्रम है जहां शिक्षक और बच्चे पलक झपकते निर्णय लेते रहते हैं कि अब आगे क्या करें। इसके विपरीत, एक अच्छे बाल–केंद्रित कार्यक्रम में योजना बनाने का बिल्कुल अहम् स्थान है। योजना बनाते समय निम्नलिखित को ध्यान में रखना है :

- पाठ्यचर्या के विशिष्ट लक्ष्य व अलग–अलग अधिगम क्षेत्रों के लिए स्तर–वार अपेक्षित अधिगम निर्गम।
- उपलब्ध साधन, वित्त व सामग्री के रूप में।
- सीखने–सिखाने के लिए उपलब्ध समय।
- जिन बच्चों को पढ़ाया जा रहा है, प्रवेश के समय उनका स्तर एवं वे विकासक्रम के किस चरण पर हैं।

एक अच्छे कार्यक्रम मे **लंबी अवधि** की (या दीर्घकालीन) व **छोटी अवधि** की (या अल्पकालिक) योजना बनाने की ज़रूरत पड़ती है। दीर्घकालीन योजना का अर्थ हुआ वार्षिक योजना या जिन अधिगम क्षेत्रों को पूरा करना है उनकी सूची बनाकर मोटे तौर पर पूरे साल की योजना बनाना। इसे आगे फिर और छोटी अवधियों में तोड़ा जा सकता है – सत्रवार या मासिक योजना इकाइयों में। अल्पकालिक योजना दीर्घकालीन योजनाओं पर आधारित है, तथा इसके लिए और अधिक विस्तार में पाक्षिक या साप्ताहिक योजना बनाने की जरूरत पड़ती है, जिसके आधार पर दैनिक योजना बनाई जा सकती है।

दैनिक योजना

दैनिक योजना बनाते समय योजना बनाने के कुछ मूलभूत सिद्धांतों का पालन करना पड़ेगा। दैनिक समय–सारणी में इनका संतुलन होना आवश्यक है –

- हर पाठ्यचर्या क्षेत्र के लिए निर्धारित समय के अनुपात में विभिन्न क्षेत्रों के निमित्त गतिविधियाँ
- बड़े समूह, छोटे समूह, जोड़े व व्यक्तिगत गतिविधियाँ
- कक्षा के बाहर और अंदर की गतिविधियाँ
- सक्रिय व शांत गतिविधियाँ, जैसे– गोल घेरे में खेले गए गणित के खेल के तुरंत बाद हो सकता है कहानी सुनने का सत्र
- निर्देशित, खुले अंत वाली या सृजनात्मक गतिविधियाँ
- नए अधिगम या पुनरावृत्ति व सतत् आकलन के लिए गतिविधियाँ

गुणवत्ता के अच्छे स्तर वाले कार्यक्रम के लिए योजना बनाना सारभूत तो है, लेकिन यह याद रखना भी महत्त्वपूर्ण है कि योजना को लचीला होना चाहिए और उसमें तात्कालिक अधिगम स्थिति के अनुसार बदलाव का प्रावधान होना चाहिए। एक प्रभावकारी बाल–केंद्रित कक्षा के लिए बेहतर होगा और बहुकक्षा शाला की जगह एक शिक्षक प्रति कक्षा हो जो कि सामान्य तौर पर शहरी शासकीय शालाओं की स्थिति है। जिस रूप में विषय–वार शिक्षकों और जड़ समय–सारणी का पालन शहरी शालाओं में किया जाता है, वह गतिविधि–आधारित कक्षा के लिए सहायक नहीं है क्योंकि इस तरह की कक्षा में आवश्यकता है कि समय में लचीलापन हो तथा शिक्षा विभिन्न विषयों के बीच अंतर्संबंध स्थापित करे। बच्चों को योजना बनाने में जोड़ना बहुत वांछनीय है क्योंकि यह उनके चिंतन को सक्रिय करता है, विकल्पों के बीच चुनने और निर्णय लेने के मौके देता है, साथ ही उनके अधिक जुड़ाव व रुचि को भी आमंत्रित करता है।

दैनिक योजना के हर रोज शारीरिक शिक्षा/खेल–कूद और कला/संगीत/नाटक के लिए कुछ समय शामिल होना चाहिए।

बाल–केंद्रित उपागम के माध्यम से चार स्तंभों का निर्माण

- बाल–केंद्रित उपागम इन स्तंभों के निर्माण में सहायता कर सकता है। : समझना सीखना उन गतिविधियों के जरिये जिनमें शामिल हैं अवलोकन, चिंतन, प्रयोग करना, तर्क करना, समस्या सुलझाना, रिपोर्ट बनाना, पढ़ना, आदि।
- करके सीखना ऐसी गतिविधियों के जरिये, जिनमें शामिल हैं– बच्चों को सामग्री की रख–रखाव व जमावट के लिए जिम्ममेदार बनाना, कक्षा को साफ रखना, छोटे–मोटे काम करना, श्यामपट्ट को साफ करना, साथ ही करके सीखना, उदाहरण के लिए, एक दूसरे की लंबाई का रिकार्ड रखना, सरल प्रयोग करना जैसे कक्षा में फर्नीचर को नापना, वास्तविक समस्याओं को सुलझाना, आदि।

एक साथ जीना सीखना जिसके माध्यम हो सकते हैं : समूह गतिविधियां सामग्री को बांटना, अपनी बारी का इंतजार करना, सहपाठी अनुशिक्षण (peer tutoring) द्वारा सीखने में एक–दूसरे की मदद करना, समूहों को कक्षा में अलग–अलग जिम्ममेदारियां सामूहिक रूप से संभालने के लिए दी जाएं, अलग–अलग बच्चों को बारी–बारी से मॉनीटर बनने का मौका देना, आदि।

पूर्ण होना सीखना जिसके माध्यम हो सकते हैं : बच्चों की पहुंच के हिसाब से उन्हें कार्य देना व सकारात्मक फीडबैक देकर उन्हें योग्य महसूस करने के मौके देना, जिससे कि असफलता से जूझ पाने में उनकी सफलता की संभावना अधिक हो, उन्हें अपनी सृजनात्मकता को बाहर लाने के मौके देना प्रजातांत्रिक माहौल प्रदान करना जिसमें स्वतंत्रता व आत्मविश्वास के साथ विचारों को व्यक्त किया जा सके, संप्रेषण के मौके दिए जा सकें; छोटे बच्चों को सरल स्वतंत्र खेल की स्थितियों में निर्णय लेने के मौके मिल सकें, व बड़े बच्चों के लिए मस्तिष्क मंथन, चर्चाओं प्रोजेक्टों की योजना बनाने के मौके; और मूल्य शिक्षा व वांछनीय व्यवहार को प्रोत्साहन देने के लिए शालेय स्थिति में भूमिका के लिए आदर्श (रोल मॉडल) प्रस्तुत करना।

सीखने–सिखाने की रणनीतियां

जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है, किसी प्रभावकारी बाल–केंद्रित कार्यक्रम के लिए विधि को गतिविधि–आधारित व बच्चों के लिए आनंददायी होना पड़ेगा। गतिविधि आधारित विधि के लाभ ये हैं कि :

- बच्चों को रटने की जगह करके व अनुभव के जरिये सीखने का मौका मिलता है, जो उन्हें बेहतर समझ की ओर ले जाता है।
- बच्चों को कौशलों के अभ्यास का मौका मिलता है, उदाहरण के लिए आनंददायी रूप से पढ़ना और लिखना सिर्फ कौशलों के प्रयोग के लिए अभिप्रेरणा भी।
- बच्चों को अपनी गति व शैली से सीखने का मौका मिलता है।
- बच्चों को प्रयोग करने, खोजने, अपने ज्ञान को रचने का मौका मिलता है।
- बच्चों में सीखने के प्रति अधिक स्थायी रुचि पैदा होती है।
- बच्चों को अधिगम के चार स्तंभों को और मजबूत करने का मौका मिलता है।

सीखने–सिखाने के लिए नमूने की गतिविधियाँ

स्तर 1		स्तर 2	
• कहानी कहना / सुनना • नाटक • कविताएं और गीत सुनाना • कठपुतली खेल • भाषा के खेल • चित्र पठन • कहानी की किताबें पढ़ना • प्रकृति दर्शन / परिभ्रमण	• वार्तालाप / चर्चा • गीत गाना, चित्र बनाना, रंगना, • नृत्य आदि। • श्यामपट्ट का सृजनशील प्रयोग • सामग्री के प्रयोगों से संबंधित गतिविधियां, जैसे डॉमिनो, पज़ल्स, कार्ड, आदि।	• कहानी सुनाना / सुनना • कहानी की किताबें पढ़ना • प्रोजेक्ट्स • सर्वेक्षण • श्यामपट्ट का सृजनशील प्रयोग • क्विज / प्रश्नोत्तरी • चर्चाएं • गायन, नृत्य, चित्र बनाना / रंगना, मिट्टी के खिलौने बनाना, कागज से काम आदि। • रचनाएँ तैयार करना। • मस्तिष्क मंथन सत्र (brain storming) • सृजनात्मक लेखन • प्रकृति दर्शन व परिभ्रमण / सैर	• नाटकीयकरण / अभिनय • भाषा / गणित के खेल • सामग्री तैयार करना • मानचित्रों व ग्लोब आदि का प्रयोग • वर्ग–पहेलियों को हल करना • प्रश्न सोचना / पूछना • प्रयोग करना पहेलियों / पजल्स को बनाना व हल भी करना • स्क्रैपबुक बनाना

इस पर गौर करना जरूरी है कि शिक्षक–केंद्रित और 'सीधे' पढ़ाने की तुलना मे *हर बच्चे की भागीदारी के साथ गतिविधि–आधारित शिक्षण* में किसी अधिगम क्षेत्र को सीखने में अधिक समय लगना स्वाभाविक है। परन्तु अगर गतिविधियों को अच्छी तरह से सुनियोजित किया जाए तो यह अधिक एकीकृत अधिगम की ओर ले जाती है। पहले–पहले, जब शिक्षक इसके आदी नहीं हैं, उन्हें थोड़ा अधिक प्रयास भी करना पड़ता है। परन्तु महत्त्वपूर्ण है यह स्मरण करना कि गतिविधि–आधारित तरीके से सीखना कहीं ज्यादा बेहतर व स्थायी है। *अगर*

हम चाहते हैं कि सभी बच्चे सीखें, और समझ के साथ सीखें न कि रट कर, तब इस विधि के लिए कोई और विकल्प नहीं हो सकता।

बहुविधि के बारे में झलकती नई सोच व बच्चों के सीखने के तरीकों के बारे में जानी हुई भिन्नता को ध्यान में रखते हुए यह जरूरी बन जाता है कि *एक ही चीज को अलग–अलग तरीकों से पढ़ाने की योजना बनाई जाए, अलग–अलग उपागमों व माध्यमों का प्रयोग करते हुए।* इसलिए शिक्षक के पास हर अधिगम क्षेत्र के लिए नाना प्रकार की गतिविधियों का भंडार होना आवश्यक है ताकि जरूरत पड़ने पर वह उनका प्रयोग कर सके।

यह याद रखना भी महत्त्वपूर्ण है कि गतिविधि– आधारित शिक्षण का मतलब यह नहीं है कि वह तभी हो सकता है जब एक अच्छी तरह डिज़ाइन किया गया 'किट' हो। बहुत बड़ी संख्या में ऐसी उपयोगी गतिविधियां उपलब्ध हैं जिनके लिए किसी अतिरिक्त सामग्री की जरूरत नहीं पड़ती, बस वही पहले से मौजूद पाठ्यपुस्तक, श्यामपट्ट और आसपास के पर्यावरण का थोड़ा अधिक सृजनात्मक प्रयोग कर के भी गतिविधियां अच्छी तरह से की जा सकती हैं। जैसे– श्यामपट्ट पर एक डैश (रेखिका) के बाद एक अक्षर (–ट) लिख कर बच्चों से पूछना कि वे बूझें शब्द क्या हैं और फिर बूझे गए शब्द को लिखना बच्चों के लिए बहुत मजे की बात है। इस प्रक्रिया में 30 बच्चों की कक्षा में बच्चों को श्यामपट्ट से दो अक्षर वाले 30 शब्द तक मिल सकते हैं, जो कि उनकी शब्द सम्पदा को बढ़ाने में मदद करेगा।

गतिविधि–आधारित सीखने–सिखाने का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण पहलू है– दिये गए अधिगम उद्देश्यों को दिग्सूचकों के रूप में प्रयोग कर बच्चों की प्रगति की निरंतर मॉनीटरिंग करना। अगर इसके लिए ठीक से योजना नहीं बनाई गई तो इस उपागम में यह खतरा है कि इसके अनौपचारिक रूप की वजह से बच्चों को गतिविधियों में आनंद तो आए पर वे अपेक्षित अधिगम निर्गमों के रूप में उनसे कुछ लाभ न उठा पाएँ।

परिप्रेक्ष्य विकास सत्र–4 सतत एवं समग्र आकलन की अवधारणा

सत्र के उद्देश्य :

1. आरटीई अधिनियम प्रमुख रूप से किस प्रकार के शैक्षणिक बदलाव के प्रश्न उठा रहा है उन्हें समझ पाएंगे।
2. इन शैक्षणिक बदलावों के मुख्य सामाजिक संदर्भ, सरोकार एवं वैचारिक आधारों पर समझ बना पाएंगे।
3. इन्हीं बदलावों में से एक, प्रमुख बदलाव ''आकलन प्रक्रिया'' से संबंधित बदलावों की आवश्यकता, वैचारिक आधारों एवं बाल–केन्द्रित शिक्षण विधा की आवश्यक शर्त के रूप में समझ बना पाएंगे।

विधा : चर्चा –

चर्चा में आप, दिए गए वीडियो, नोट एवं नीचे दिए गए बिन्दुओं का प्रयोग कर सकते हैं –

1. मूल्यांकन का अब तक का स्वरूप (परीक्षा आधारित) सत्र के अन्त में सभी बच्चों को एक ही प्रश्न–पत्र द्वारा, एक निश्चित समय अवधि में आँकता रहा है। इसका मुख्य उद्देश्य बच्चों के सीखे हुए पर निर्णय देने जैसे पास–फेल, प्रथम श्रेणी, द्वितीय श्रेणी इत्यादि रहा है।
2. शिक्षा के अधिकार अधिनियम के लागू होने के उपरान्त हमारे लक्ष्यों में बड़े परिवर्तन हुए हैं। सभी बच्चों के लिए समतुल्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करने का सपना तभी सफल हो सकता है जब हमारी मूल्यांकन व्यवस्था का उद्देश्य बच्चों को सफल–असफल कह कर छँटनी करने के स्थान पर सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को और सुदृढ़ करना हो।
3. सीखने के सिद्धान्तों के अनुरूप यदि शिक्षक सही मायनों में बच्चों की सहायता करना चाहते हैं तो उन्हें अलग–अलग उपकरणों की सहायता से यह पता लगाते रहना होगा कि उनके बच्चों ने क्या सीखा व उनकी क्या आवश्यकताएँ है।
4. सीसीई इसी प्रक्रिया का नाम जो यह माँग करती है कि बच्चों की सही मदद तभी की जा सकती है जब शिक्षक उनके वास्तविक स्तरों के अनुरूप अवसर दें व बच्चों के बारे में लगातार जागरूक रहते हुए आकलन के फीडबैक के अनुरूप अपनी योजना संधारण करें।
5. सीसीई व सीसीपी दोनों मूलतः गुणवत्ता सुनिश्चित करने हेतु प्रक्रियाएं हैं।

सभी बच्चों के लिए समतुल्य गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का हमारा लक्ष्य तभी प्राप्त हो सकता है, जब हमारे पाठ्यक्रमणीय उद्देश्य समग्र व उपयुक्त हों, हमारे पढ़ाने के तरीके उनके अनुरूप हों तथा आकलन के तरीके व उपकरण भी इसी लक्ष्य के साथ संगत हों।

मूल्यांकन की पूरी बातचीत में मूल्यांकन क्यों? एक बहुत महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। यह इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि आकलन/मूल्यांकन के दूसरे पक्षों जैसे मूल्यांकन की अवधि, उपकरण, प्रक्रिया इत्यादि को प्रभावित करता है।

यदि हम अपने नए लक्ष्य (सभी बच्चों के लिए उपयुक्त शिक्षा) को देखें, तो हमें वर्तमान में प्रचलित मूल्यांकन प्रणाली में कई कमियाँ नजर आएंगी। सर्वप्रथम हमें यह देखना होगा कि अब तक प्रचलित समान परीक्षा आधारित मूल्यांकन प्रणाली का मूल लक्ष्य क्या था?

यदि हम परीक्षाओं के अब तक के प्रचलित स्वरूप को देखें तो ये मूलतः सत्र के अंत में, सभी बच्चों को, एक जैसे प्रश्न पत्र द्वारा यह बताने के लक्ष्य से की जाती रही है कि किसने कितना सीखा? कौन अगले स्तर पर जाना चाहिए व कौन नहीं? ये मूलतः बच्चों के सीखने को मूल्य प्रदान कर, अलग–अलग श्रेणियों में बाँटने का कार्य करती रही हैं (प्रथम, द्वितीय, तृतीय श्रेणी में पास एवं फेल)।

मूल्यांकन व्यवस्था का अब तक का प्रयोग छँटनी करने हेतु भी किया जाता रहा है। इसके पीछे यह मान्यता रही है कि सभी बच्चे सफल होकर आगे बढ़ने के लिए सक्षम नहीं होते। अतः परीक्षा का प्रयोग कर, सक्षम बच्चों को उत्तीर्ण कर आगे भेजना चाहिए और शेष को वहीं रोक लेना चाहिए। इनका प्रयोग योग्यताओं के अनुसार चयन करने में भी किया जाता रहा है (रोजगार हेतु, अन्य शैक्षिक सुविधाएँ जैसे छात्रवृत्ति इत्यादि हेतु)

अतः यदि हम इस मूल्यांकन व्यवस्था को इस संदर्भ में देखें कि वह अब तक कि प्रचलित मान्यताओं और स्वीकार्य लक्ष्यों के अनुरूप थी, तो यह असंगत प्रतीत नहीं होगी। यदि इसे, नए संदर्भ में, नए लक्ष्य के सापेक्ष देखें तो हमें असंगति अवश्य नज़र आएगी। अब जब सभी बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा में सफल करने का लक्ष्य अपरिहार्य है और इसे सुनिश्चित करने का दायित्व बच्चे व अभिभावक के साथ–साथ शिक्षक, विद्यालय व राज्य पर माना गया है, मूल्यांकन के उद्देश्य, उपयोग व इसके उपकरणों में बड़े बदलाव की मांग एक अनिवार्यता बन गई है।

यदि हम इस प्रसंग को सीखने के सिद्धांतों के सापेक्ष देखें, तो पाएंगे क्योंकि सीखना लगातार चलता रहता है व इसमें सीखने वाले के वर्तमान के ज्ञान, समझ व योग्यताओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है, मूल्यांकन का सही उपयोग इन स्तरों को समझने व इनका सीखने–सिखाने को और व्यवस्थित व उपयुक्त बनाने हेतु होना चाहिए।

यदि हम बच्चों को सफल बनाना चाहते हैं तो हमें लगातार, सतत रूप से, यह जानने की आवश्यकता है कि उनका स्तर व जरूरतें क्या हैं ? क्योंकि साथ ही, हम समग्र लक्ष्यों की बात कर रहे हैं, आकलन भी बच्चों के व्यक्तित्व के सभी मूल पक्षों का होना चाहिए, ताकि उस अनुरूप उन्हें समर्थन व मार्गदर्शन दिया जा सके।

यदि हम मूल्यांकन से जुड़े मूल प्रश्नों को देखें, वो ये हैं –

मूल्यांकन क्यों? मूल्यांकन क्या? मूल्यांकन कैसे व कब?

1. **मूल्यांकन क्यों –** नए लक्ष्य मूल्यांकन के उद्देश्यों को सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में निहित मानते हैं व इसे सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को और सुदृढ़ बनाने हेतु किए जाने की माँग रखते हैं।

2. **मूल्यांकन किसका** – प्रचलित परीक्षा प्रणाली पर यह प्रश्न उठते रहे हैं कि वह मूल रूप से जानकारी आधारित ज्ञान का ही मूल्यांकन करने पर जोर देती रही है व समग्रता का अभाव रखती हैं। ऐसी कई दक्षताएँ हैं जो पेपर–पेंसिल टूल से नहीं आँकी जा सकती। अतः क्योंकि सीखने के उद्देश्यों में बड़े परिवर्तन किए गए हैं (एन.सी.एफ. 2005) के बाद) अतः मूल्यांकन में भी बड़े बदलावों की माँग लाजमी है।

3. **मूल्यांकन कैसे व कब** – एक बड़े अंतराल के बाद परीक्षा लेकर बच्चों के सीखे हुए का मूल्यांकन करना अब तक का प्रचलित तरीका रहा है। इस पर बड़े प्रश्न मूल्यांकन की वैधता व वस्तुनिष्ठता को लेकर उठाए जा रहे हैं। क्या एक तरीके से एक ही समय में यह सही में जाना जा सकता है, कि बच्चों ने क्या सीखा है? क्योंकि एक बार ली गई परीक्षा को कई कारक प्रभावित करते हैं, परीक्षा के परिणाम कितने वस्तुनिष्ठ हैं, यह बड़ा प्रश्न है।

अतः सी.सी.ई. प्रक्रिया, सीखने के दौरान, लगातार, अलग–अलग तरीकों/उपकरणों के प्रयोग से, वस्तुनिष्ठ तरीकों से बच्चों के ज्ञान के मूल्यांकन की माँग करती है। इसके उपकरण हैं– अवलोकन, पोर्टफोलियो, आकलन कार्यपत्रक, आकलन चैकलिस्ट, इत्यादि।

प्रचलित परीक्षा प्रणाली	सी.सी.ई.
आकलन क्यों –	
बच्चों के स्तरों को जानकर उनके सीखने के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण निर्णय लेना (पास–फेल प्रथम श्रेणी, द्वितीय, इत्यादि)	बच्चों के स्तरों व प्रगति को जानने हेतु ताकि उन्हें उचित समर्थन दिया जा सके व सीखने–सिखाने की प्रक्रिया को और सुदृढ़ व उपयुक्त बनाया जा सके।
आंकलन किसका –	
यह प्रणाली विषयवस्तु व पाठ्यपुस्तक केन्द्रित होती है व अब तक जानकारी आधारित ज्ञान को रटने पर ज़ोर देती रही है।	यह पद्धति बच्चों के व्यक्तित्व के सभी पक्षों आकलन पर ज़ोर देती है।
आकलन कैसे/कब	
इसमें परीक्षाओं के माध्यम से एक निश्चित समयांतराल में मूल्यांकन किया जाता है। जो कि सीखने की प्रक्रिया सम्पन्न होने के उपरान्त होता है।	यह प्रक्रिया लगातार प्रतिदिन सीखने–सिखाने के दौरान, विभिन्न उपकरणों की सहायता से आकलन करने की बात करती है।

आकलन का प्रभाव	
परीक्षाएँ अधिकतर बच्चों में भय व अनुचित प्रतिस्पर्द्धा पैदा करती हैं।	सी.सी.ई. क्योंकि सीखने के दौरान लगातार चलता रहता है, बच्चों को आकलन के प्रति सहज बनाती है व स्व आकलन पर जोर देती है।

सी.सी.ई. का क्रियान्वयन बच्चों के सीखने को और सुदृढ़ बनाने हेतु कैसे किया जाए–

बच्चों के सीखने के बारे में हमारी समझ है कि वे कुछ कार्य बिना सहायता के कर लेते हैं, कुछ सहायता से व कुछ कार्य ऐसे हैं जो बहुत सहायता के बाद भी, वर्तमान ज्ञान के आधार पर, नहीं कर सकते। शिक्षक की जिम्मेदारी है कि वे उन कार्यों को व्यवस्थित कर, बच्चों के साथ वह कार्य करें, जिन्हें वे पहले कुछ सहायता से कर पाए व कुछ समय बाद स्वयं कर लें।

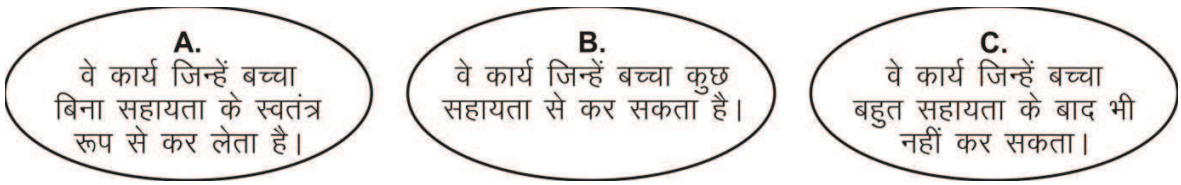

जैसे–जैसे हम बच्चों के साथ विभिन्न अवधारणाओं पर कार्य करते हैं, वे अवधारणाएँ B से A की ओर चलती रहती हैं व C से जुड़ी अवधारणाएँ B में आती जाती हैं।

यह बिन्दु, क्योंकि बच्चों के वर्तमान ज्ञान समझ एवं कौशलों पर निर्भर करते हैं, सभी बच्चों के लिए अलग होते हैं। आकलन का उपयोग इसी बात को लगातार जानते रहने के लिए किया जाना चाहिए। अतः योजना बच्चों के सतत आकलन के आधार पर व उपयुक्त लक्ष्यों के अनुरूप बनाई जानी चाहिए।

यदि हम वर्तमान में प्रस्तावित योजना के स्वरूप को देखें तो उसमें विभिन्न तरह के कार्यों के माध्यम से कक्षा–कक्षीय क्रियाकलापों को व्यवस्थित करने की बात की गई है। वे हैं –

- सामूहिक कार्य
- उपसमूहों में कार्य
- व्यक्तिगत कार्य

इस संरचना/ढाँचे को बहुत सोच–विचार कर, कुछ लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए दिया गया है।

1. संपूर्ण कक्षा के साथ कार्य – वे कार्य जो सभी बच्चों के लिए समान लक्ष्य (कक्षा अनुरूप) कक्षा–कक्ष को ध्यान में रखते हुए हो सकते हैं व जिन पर सम्पूर्ण कक्षा के साथ (अलग–अलग स्तरों के बच्चों के साथ) एक साथ कार्य करवाया जा सकता है।

इसमें शिक्षक अपनी बातचीत को इस तरह व्यवस्थित करते हैं कि विविध स्तरों के बच्चे भी इसमें से अपने लिए समझ विकसित कर पाते हैं व वर्तमान के ज्ञान से जोड़कर देख पाते हैं।

2. जहाँ स्तरों में बहुत ज्यादा अंतर हो, कि किसी भी तरह सभी एक जैसे लक्ष्यों पर कार्य नहीं कर सकते, तब अलग–अलग स्तर अनुसार समूह बनाने की आवश्यकता पड़ती है। यह समूह व उनकी संरचना उनकी कक्षा की स्थिति के अनुसार तय होती है। उनके लिए कक्षा की वर्तमान स्थिति के अनुरूप लक्ष्य व क्रियाकलाप तय किए जाते हैं। समूह बाँटने का कारण उनके समूहों को उनके अनुरूप आवश्यक मदद करना है। पर यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि कहीं हम समूहीकरण कर अपने अंदर उनके संदर्भ में पूर्वाग्रह या लक्ष्यों में असमानता तो नहीं रख रहे। कहीं एक समूह को हमने समझदार व एक को पिछड़ा या कम क्षमताओं वाला तो नहीं समझ लिया? ऐसे में ये समूह स्थाई बन जाते हैं व हम कुछ समूहों के लिए बहुत कम आकाक्षाएँ रखते हैं, उनके लिए कम प्रयत्न करते हैं व उनकी थोड़ी प्रगति से भी संतुष्ट हो जाते हैं। यह बिल्कुल भी उचित स्थिति नहीं है। यहाँ अपेक्षा यह थी कि जो पीछे हैं उन्हें ज्यादा सहायता मिले व हम यह कोशिश करें कि वे जल्दी ही बाकी समूहों के स्तर पर आ जाएँ। अतः इस बात को रखा गया कि बहुत से कार्य ऐसे हैं जैसे कहानी सुनना, बातचीत, अवलोकन, कला एवं हस्तकार्य इत्यादि, यहाँ सभी के साथ एक साथ कार्य हो ताकि किसी समूह को हीन भावना ना महसूस हो व जो समूहों में कार्य हो रहा है वह इन लक्ष्यों पर, हो कि सभी बच्चे तेजी से आगे बढ़ पाएं।

उपसमूहों में कार्य सम्पूर्ण कक्षा में मिश्रित समूहों में भी किया जा सकता है जिससे बच्चे दूसरे की सहायता कर पाएं व मिलकर सीखें।

3. व्यक्तिगत कार्य – सीखने में व्यक्तिगत अभ्यास व कार्य भी बहुत महत्त्व रखता है। अतः यह आवश्यक है कि आप किसी भी अवधारणा के लिए बच्चों को व्यक्तिगत कार्य करने के अवसर दें।

अतः तीनों तरह के कार्यों को रणनीतिक रूप से, ऊपर दिए गए लक्ष्यों के अनुरूप सुझाया गया है।

समेकन – सी.सी.ई. आकलन को पढ़ने–पढ़ाने के दौरान, उसे और सुदृढ़ करने की एक माँग है। यह अपेक्षा रखती है कि शिक्षक महज पाठ्यपुस्तकों के पाठों को सभी बच्चों के साथ करवाने की बजाय, पाठ्यक्रमणीय उद्देश्यों को समझे और उनके अनुरूप कार्य करें। दूसरी माँग यह है कि शिक्षक सीखने–सिखाने के तरीकों को समझें व उनके अनुरूप कार्य करें ना कि महज परीक्षा प्रणाली के अनुरूप बच्चों को तैयार करना। अतः जब मूल्यांकन प्रणाली सिर्फ जानकारियों को रटने पर आश्रित होती है तो शिक्षक ना पाठ्यक्रमणीय उद्देश्यों को याद रखते हैं और न ही सीखने के तरीकों पर, वे मूलतः परीक्षा में क्या पूछा जाएगा, उसकी तैयारी मात्र करवा देते हैं। सी.सी.ई. इस पूरी प्रणाली में बदलाव की एक पहल है। यह पहल है कि वास्तव में समग्र लक्ष्यों पर सभी बच्चों के साथ, बालकेन्द्रित विधाओं के प्रयोग से कार्य हो व मूल्यांकन शिक्षक को मदद करें कि वे सभी बच्चों को सफल बना पाए। शिक्षा गुणवत्तापूर्ण हो व सभी के लिए हो, यही हमारा लक्ष्य है।

बाल केन्द्रित आकलन

सीखने–सिखाने की स्थिति में बच्चें की प्रगति का आकलन एक बहुत ही महत्वपूर्ण पहलू है। यह सीखने–सिखाने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग है और इसे उससे अलग कर के नहीं देखा जा सकता है। दुर्भाग्यवश, आज के संदर्भ में, सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में सहयोग देने की जगह यह उस पर हावी है, और शिक्षकों व अभिभावकों द्वारा इसे साध्य के रूप में लिया जाता है। नतीजा यह होता है कि बच्चों को ही उसकी चपेट का सामना करना पड़ता है।

यहाँ हम इस पहलू की समीक्षा करेंगे और इस बारे में तीन विशिष्ट प्रश्नों के उत्तर ढूंढने की कोशिश करेंगे।

- हमें बच्चे के अधिगम का आकलन करने की आवश्यकता क्यों है?
- किसका आकलन किया जाए और कब?
- आकलन किस तरह किया जाए?

हमें बच्चों के अधिगम का आकलन करने की आवश्यकता क्यों है?

शिक्षण, सीखना और आकलन– इन तीनों का एक दूसरे से बहुत गहरा संबंध है। बिना यह जाने कि जो पढ़ाया गया है वह बच्चों ने ग्रहण किया है या नहीं, न तो शिक्षण किया जा सकता है न ही किया जाना चाहिए। यही सुनिश्चित करने के लिए आकलन सीखने–सिखाने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग बन जाता है।

सीखने–सिखाने का चक्र

- योजना बनाना
- पढ़ाना
- जो सीखा गया है उसका आकलन
- औपचारिक शिक्षण प्रदान करना
- बच्चों के वर्तमान ज्ञान, कौशलों, अभिवृत्तियों का आकलन

कई उद्देश्यों को पूरा करने के लिए आकलन की आवश्यकता है –

- पूर्ण अधिगम कार्यक्रम की गुणवत्ता में सुधार के साथ–साथ अलग से हर बच्चे के अधिगम में सुधार लाने में मदद के लिए
- अभिभावकों, अगली कक्षा के शिक्षक और बच्चों को फीडबैक या प्रतिक्रिया देने के लिए
- शिक्षा के अगले चरण में प्रवेश के लिए कुछ योग्यता घोषित करने के निमित्त उदाहरण के लिए, कक्षा 5 में केंद्रीकृत आकलन।
- शिक्षा में समग्र राष्ट्रीय मानकों की मानीटरिंग करने के लिए।
- बच्चों की मोटी अधिगम आवश्यकताएं पहचानने के लिए ताकि उपलब्ध साधनों के प्रयोग के निमित्त योजना बनाई जा सके व सभी स्तरों पर पाठ्यचर्या की समीक्षा की जा सके।

* साभार : एनसीईआरटी–1998, शिक्षा के पहले कदम

आम धारणा के विपरीत, आकलन इन उद्देश्यों के लिए नहीं है–

- बच्चे की क्षमताओं या उसके अंदर की संभावनाओं पर निर्णय लेने के लिए
- बच्चों की क्षमताओं की तुलना करने और उन्हें मेरिट के क्रम में श्रेणीबद्ध करने के लिए।

अभिवृत्ति में परिवर्तन की आवश्यकता

इस तरह आकलन के प्रचलित तरीकों की समीक्षा में पहला कदम, विशेष तौर पर प्राथमिक चरण पर, यह होगा कि आकलन के उद्देश्य से जुड़े सभी लोगों में अभिवृत्ति परिवर्तन में मदद करना।

'मेरिट', 'स्थान', 'ग्रेड', आज की व्यवस्था में उभरती प्रमुख चिंताओं के रूप में प्रतीत होते हैं, जिनसे अस्वस्थ होड़ या प्रतिस्पर्धा बढ़ती है और जिसका परिणाम होता है बच्चों के लिए सदमे जैसे अनुभव। अपमान, आत्मसम्मान में कमी, और हतोत्साहित हो जाना ऐसी आम भावनाएं हैं जो अधिकांश बच्चे सामान्यतः आकलन के साथ जोड़ते हैं। 'टेस्ट' या 'परीक्षा' जो की जाती है वह यह ज्यादा देखती है कि 'बच्चे को क्या नहीं आता' न कि 'बच्चे को क्या आता है'।

इस तरह सीखने–सिखाने की पूरी प्रक्रिया में ऐसा बहुत कम है जो बच्चे को पूर्ण होना सीखने में मदद करें। साथ ही आकलन से निकल कर आने वाले परिणामों का बच्चे के लिए उपचारात्मक शिक्षण के रूप में कोई अनुवर्तन नहीं होता है, और इसके चलते बच्चे के सीखने में खाइयां और भी बढ़ती जाती हैं।

इसलिए इस पर जोर देना आवश्यक है कि हर बच्चे की प्रगति का अलग–अलग आकलन स्वभाव में नैदानिक होगा। उसका विशिष्ट उद्देश्य यह है कि वह सीखने और सिखाने को निम्नलिखित माध्यमों से सुधारे –

क – अधिगम की शक्तियों और कमजोरियों का निदान कर के

ख – अपेक्षित अधिगम निर्गम के विरुद्ध बच्चों की प्रगति का मापन कर के

ग – सीखने–सिखाने की रणनीतियों की समीक्षा और जहां आवश्यक हो वहां योजना फिर से बना कर के।

यह कई बार अनदेखा कर दिया जाता है कि गतिविधि आधारित शिक्षण का स्वभाव ही ऐसा है कि वह सहज रूप से बच्चों के अधिगम का पुनर्बलन ही नहीं करता बल्कि शिक्षक को हर बच्चे की उपलब्धि के बारे में फीडबैक भी देता है।

किस का आकलन हो और कब

बच्चे की प्रगति के आकलन को उन सारे पहलुओं को देखना चाहिए जो चार स्तंभों के तहत चिह्नित किए गए है, विशेष तौर पर हर अधिगम क्षेत्र के तहत अंततः अपेक्षित अधिगम निर्गम। आकलन का ध्येय होना चाहिए कि बच्चे को उपलब्धि के संतोषजनक स्तर तक पहुंचाए, न कि केवल 40 प्रतिशत अंक प्राप्त कर बच्चों को पास करवाना। आकलन का लक्ष्य यह पता करना भी होना चाहिए कि बच्चे को क्या 'आता है', केवल इतना ही नहीं कि उसे क्या नहीं आता।

बच्चे की प्रगति का आकलन कितनी बार किया जाना चाहिए? जैसा कि हम सब जानते हैं, सीखना एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। परिणामस्वरूप, अगर हम अपेक्षित अधिगम निर्गमों को ध्यान में रख यह सुनिश्चित करना

चाहते हैं कि बच्चे की प्रगति संतोषजनक है, तो हमें उसके सीखने का निरंतर आकलन करते रहना पड़ेगा ताकि हम कठिनाइयां (अगर हों तो) पहचान सकें और समय पर उनका निवारण कर सकें।

प्रस्तावित बहु–स्तरीय उपागम में यह और भी महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि आकलन यह तय करेगा कि बच्चा उस स्तर के किस बिंदु पर है, और उसी के अनुरूप उसे अधिगम अनुभवों को प्रदान करने की आवश्यकता होगी।

इसलिए जहां नियमित रूप से किसी प्रकार के आकलन की आवश्यकता पड़ेगी, कुछ महत्वपूर्ण संक्रमण/परिवर्तन बिंदुओं पर एक अधिक संरचित आकलन आवश्यक होगा, एक ही स्तर के तहत और स्तरों के आर–पार भी।

जैसा कि सामग्री के खंड में उल्लेखित किया गया यह सुझाया जा रहा है कि अभ्यास–पुस्तिका को क्रमिक व मॉड्यूलर रूप में तैयार किया जाए। बच्चों की प्रगति की मॉनीटरिंग सहज करने के लिए हर मॉड्यूल के प्रारंभ व अंत में कुछ संरचित आकलन मद शामिल किए जाने चाहिए, जो बच्चे के प्रवेशीय स्तर के बारे में पता करने में शिक्षक की मदद करेंगे, साथ ही जिसके आधार पर शिक्षक यह भी तय कर सकता है कि बच्चा अगले मॉड्यूल के लिए तैयार है या नहीं।

इस तरह आकलन को हर बच्चे के लिए अलग–अलग होना पड़ेगा और उसे पूरी कक्षा के लिए अभ्यास के रूप में नहीं देखा गया है जिसे एक स्तर के तहत नियमित रूप से अर्द्ध–वार्षिक और वार्षिक परीक्षाओं के साथ एक ही समय में करना है।

लेकिन हर स्तर (यानी स्तर 1, 2 व 3) के अंतर में यह सुनिश्चित करने के लिए कि अगले स्तर के लिए सभी बच्चे 'तैयार' हैं। एक पूर्ण–कक्षा आकलन आवश्यक हो सकता है। बहु–स्तरीय उपागम के तहत, यह अपेक्षित है कि विशेष आवश्यकताओं वाले कुछ बच्चों को छोड़ कर सभी बच्चे तैयारी के इस चरण तक पहुंच सकेंगे।

आकलन किस तरह किया जाए?

आकलन कैसे का प्रश्न तीन प्रमुख मदों में देखा जा सकता है –

- आकलन की तकनीकें व प्रक्रियाएं
- हासिल की गई जानकारी को रिकार्ड करना।
- बच्चे की प्रगति को रिपोर्ट करना।

आकलन की तकनीकें व प्रक्रियाएं

सीखने के लिए विभिन्न प्रकार के अनुभव आवश्यक हैं। हम कैसे जानें कि नियोजित अनुभवों से गुजरता हर बच्चा वास्तव में सीख रहा है? हम अलग–अलग तरीकों का प्रयोग करते हैं। कभी हम गतिविधि के दौरान काम करते या अपने समूह के साथ अंतरक्रिया करते हुए बच्चे का केवल अवलोकन करते हैं। कभी हम बच्चे को किसी कृत्रिम स्थिति में डाल व्यवस्थित अवलोकन करते हैं। और कभी हम मौखिक प्रश्नों द्वारा बच्चे की उपलब्धि पता करना चाहते हैं, तो कभी और हम ये अपेक्षा करते हैं कि बच्चे लिखित रूप में प्रश्नों के उत्तर देंगे।

हम ऐसा क्यों करते हैं? क्योंकि अलग–अलग पहलुओं का सीखना दूसरे पहलुओं से बिल्कुल मुक्त नहीं होता और इसलिए विविध पहुलुओं में उपलब्धि के बारे में पता करने के लिए विविध प्रकार की तकनीकों की

आवश्यकता है। यह विशेष तौर पर गतिविधि आधारित शिक्षण के बारे में सच है जो कि व्यक्तित्व के संज्ञानात्मक पक्ष की ही नहीं बल्कि भावात्मक व मनोशारीरिक पक्ष की जरूरतें भी पूरी करता है, और इसलिए यह कागज–पेंसिल आधारित आकलन तकनीकों तक ही सीमित नहीं रह सकता।

आकलन हो सकता है –

- औपचारिक और अनौपचारिक दोनों
- मौखिक, लिखित और प्रदर्शन – आधारित
- मात्रात्मक या गुणात्मक, अलग–अलग परिस्थितियों में शिक्षक के अवलोकन पर आधारित
- व्यक्तिगत रूप से किया गया, समूहों में या पूरी कक्षा में।

याद रखें : हर अधिगम–निर्गम मात्रात्मक आकलन के लिए उपयुक्त नहीं है। उदाहरण के लिए– सहयोग या सहनशीलता। परन्तु इनका गुणात्मक आकलन जरूर किया जा सकता है, एक लंबे समय तक अलग–अलग स्थितियों में बच्चे के व्यवहार के अवलोकन द्वारा।

बच्चों के आकलन के काम को सहज बनाने के लिए ताकि वे संतोषजनक प्रगति कर सकें, शिक्षक को नैदानिक टेस्ट मदों का एक संकलन दिया जाना चाहिए, जिसमें क्रमिक रूप में सभी प्रकार के अपेक्षित अधिगम निर्गमों को शामिल किया गया है। नैदानिक टेस्ट मदों की विशिष्ट तौर पर बच्चों की शक्तियों और कमियों को पहचानने के लिए बनाया जाता है ताकि उन्हें आगे दी जाने वाली मद की योजना बन सके।

बच्चों की प्रगति का रिकार्ड रखना

कक्षा में बच्चों की बड़ी संख्या और व्यक्तिगत आकलन की जरूरत को मद्देनज़र रखते हुए, रिकार्ड रखने की किसी भी तकनीक में ये गुण होने चाहिए –

- उपयोग में आसान
- रख–रखाव सहज हो
- व्याख्या करना आसान हो, जिससे नतीजे आसानी से निकाले जा सकें।

बच्चों की प्रगति का रिकार्ड रखने के कई तरीके हो सकते हैं उदाहरण के लिए, बच्चों के कार्य के नमूने रखना, विवरण सूची (चेक–लिस्ट) और अवलोकन अनुसूची (शिड्यूल), हर मॉड्यूल के अंत में एक प्रारूप (फॉरमेट)। रिकार्डिंग को अपेक्षित अधिगम निर्गमों से निकले दिग्सूचकों के आधार पर किया जाना चाहिए।

बच्चों की प्रगति का रिपोर्ट करना

हम किसे अपनी रिपोर्ट देते हैं?

आकलन के रिकार्ड से लाभ पाने वाले प्रमुख व्यक्ति और जिन्हें हम अपनी रिपोर्ट देते हैं, वे हैं –

- खुद बच्चे
- अगली कक्षा का शिक्षक
- अभिभावक

हम किसके बारे में रिपोर्ट करते हैं?

जरूरत है कि हम इन के बारे में रिपोर्ट करें –

- बच्चे ने क्या सीखा है और उसे क्या नहीं पढ़ाया गया है
- बच्चे द्वारा सकारात्मक उपलब्धियां और प्रगति
- अगर हो तो बच्चे की कमजोरियां, उपचारात्मक कार्रवाई के लिए सुझाव – केवल अकादमिक उपलब्धियों पर ही नहीं बल्कि बच्चों की रुचियों, अभिवृत्तियों, मूल्यों और प्रतिभागिता के स्तर पर भी।

कब और कैसे हम रिपोर्ट दें ?

हमें अभिभावकों व अगली कक्षा के शिक्षक को अपनी रिपोर्ट तिमाही समेकित रिपोर्ट कार्ड के रूप में देने की आवश्यकता है। इसके साथ ही अभिभावकों से समय–समय पर अनौपचारिक चर्चाएं तो होती ही रहेंगी। ये चर्चाएं उन अभिभावकों के संदर्भ में बहुत महत्वपूर्ण हो जाती हैं जो साक्षर नहीं है और अपने बच्चे के निष्पादन के बारे में जिनकी रुचि है। रिपोर्ट कार्ड में अगर अभिभावकों की टिप्पणी के लिए जगह का प्रावधान रहे तो यह अभिभावकों के जुड़ाव को प्रोत्साहन देगा।

श्रेणियां बनाम अंक

अंकों से बच्चों में अस्वस्थ प्रतिस्पर्धा की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है और ऐसे दावों के बावजूद यह आवश्यक नहीं कि वे बच्चों की क्षमता के स्तरों में वास्तव में कोई अंतर दिखा पाते हों। साथ ही, चूंकि बच्चों के सीखने की गतियां व शैलियां भिन्न होती हैं, अंकों के आधार पर तुलना करना अवांछनीय है। प्रगति का रिकार्ड रखने के लिए, एक रेंज (वर्ग या प्रकार) के तहत श्रेणियां बेहतर इन्डेक्स (दिग्सूचक) प्रदान करती हैं।

याद रखें : बच्चे के बारे में किसी भी प्रकार की रिपोर्ट स्पष्ट, सरल, और गैर–तकनीकी भाषा में हो; और हमेशा संक्षिप्त व विषय–संगत हो। एक सकारात्मक रिपोर्ट बच्चे व उसके अभिभावकों का आत्मविश्वास व आत्मसम्मान बढ़ाने में बहुत मदद करती है। बच्चे के बारे में सकारात्मक टिप्पणी से अभिभावक अपने बच्चे पर गर्व महसूस करते हैं, तो फिर आगे दोनों के सकारात्मक संबंध और मजबूत करता है। यह बच्चे को आगे के लिए अभिप्रेरित करता है।

भाग–3

परिप्रेक्ष्य विकास सत्र

(द्वितीय)

परिप्रेक्ष्य विकास सत्र–5 प्राथमिक शिक्षा में कला एवं कार्य शिक्षण

प्राथमिक कक्षा में कला, कार्य एवं सौंदर्य बोध शिक्षण का महत्त्व एवं विषय शिक्षण के साथ इंटीग्रेशन

सत्र अवधि : 1:45 घण्टा

सत्र के उद्देश्य

- शैक्षणिक लक्ष्यों के संदर्भ में समग्रता एवं कला महत्त्व पर समझ बनाना।
- अन्य विषयों के साथ कला का Integration (एकीकरण) क्यों और कैसे? पर समझ बनाना।
- बच्चों की कला अभिव्यक्ति को कैसे समझें एवं कला शिक्षण में किन बातों का ध्यान रखें।
- कला शिक्षण एवं आकलन पर समझ बनाना।
- संभागियों को चित्रकला, नाटक एवं संगीत विधा की एक–एक गतिविधि के अनुभव से गुज़ारना।

सत्र में गतिविधियों का क्रम एवं प्रस्तावित समय विभाजन

• चेतना गीत।	3 मिनट
• सत्र के बारे में वक्तव्य।	3 मिनट
• कला शिक्षा पर प्रस्तुतीकरण PPT।	20 मिनट
• दृश्य कला शिक्षा के अंतर्गत चित्र पठन की गतिविधि की प्रस्तुति (PPT) एवं अन्य विषयों से Integrate करते हुए चर्चा करना।	25 मिनट
• नाट्यकला के अंतर्गत हाव–भाव और आवाज के उतार चढ़ाव के साथ कहानी कहना और अन्य विषयों के साथ नाट्यकला के Integration पर बात करना।	25 मिनट
• संगीत कला के अंतर्गत 3 विविध बालगीतों की प्रस्तुति के माध्यम से संगीत एवं अन्य विषयों के integration पर चर्चा करते हुए समझ बनाना।	25 मिनट
• सत्र का समेकन।	5 मिनट

प्राथमिक शिक्षा में कला : कुछ मुख्य सरोकार

प्रस्तुत नोट को कला शिक्षा के प्रस्तुतीकरण को प्रभावी रूप से करने हेतु पढ़ा जाना आवश्यक है। इसे कला शिक्षा एवं इसके महत्त्व पर संभागियों के साथ चर्चा हेतु पठन सामग्री के रूप में भी प्रयोग किया जाना अपेक्षित है।

कला क्यों?

कला एवं संगीत ऐसे पक्ष हैं जिन्हें ऐतिहासिक तौर पर मूल पाठ्यचर्या का हिस्सा नहीं माना गया है। सामान्यतः हम यह देखते हैं कि कला एवं संगीत से जुड़ी हुई गतिविधियों को ''सहपाठ्यक्रमणीय'' के रूप में संबोधित किया जाता रहा है। दूसरी तरफ यह बात की जाती है कि शिक्षा के लक्ष्यों में समग्रता होनी चाहिए जहाँ ज्ञान

एवं कौशल के संज्ञानात्मक पक्षों के साथ–साथ व्यक्तित्व के संतुलित एवं सम्पूर्ण विकास हेतु जहाँ तक संभव हो वहाँ तक प्रयास किए जाने चाहिए। जो प्रश्न यहाँ पूछा जाना चाहिए वह यह है कि क्या रचनात्मक अभिव्यक्ति के बिना सही मायनों में व्यक्तित्व के संतुलित एवं सम्पूर्ण विकास की बात की जा सकती है? शायद इस प्रश्न का उत्तर सब जानते हैं। अगला प्रश्न यह है कि रचनात्मक अभिव्यक्ति पर सीधे और प्रभावी तरीके से कैसे कार्य किया जा सकता है? यहाँ पर भी उत्तर बहुत स्पष्ट है वह यह है कि कला से जुड़े कार्य हमें रचनात्मक अभिव्यक्ति के कौशलों पर कार्य करने का सबसे प्रभावी माध्यम देते हैं। इसी के साथ कला एवं संगीत से जुड़ा रचनात्मक कार्य अन्य विषयों जैसे– भाषा, गणित, विज्ञान आदि में लक्षित संज्ञानात्मक कौशलों के विकास में भी सहायक होता है। बहुत से शोध साफ तौर पर सिद्ध करते हैं कि वह बच्चे जिन्हें रचनात्मक कार्यों में जुड़ने का मौका मिलता है वह अन्य विषयों में भी तेजी से सीखते हुए आगे बढ़ पाते हैं।

बच्चों की दुनियाँ में कला के मायने

बच्चों की रचनात्मक अभिव्यक्ति के संदर्भ में चिंतन करते हुए कुछ बातें जो हमें स्पष्ट रूप से दिखती हैं और जिनका हमेशा ध्यान रखा जाना चाहिए क्योंकि हमारा अनुभव एवं बच्चों के सीखने–समझने से सम्बन्धित मनोविज्ञान भी इन बातों को समर्थन देता है, उन्हें कुछ इस प्रकार रखा जा सकता है–

- रचनात्मक अभिव्यक्ति बच्चे के सीखने–समझने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग है।

इसके मायने हैं कि सीखने की प्रक्रिया में बच्चे वस्तुओं का एवं कृतियों का अलग–अलग तरह से निर्माण करते हैं या उनके स्वरूप में परिवर्तन करते हुए सीखते हैं यह उन्हें अपने आस–पास की दुनियाँ को समझने में मदद करता है। आपने भी देखा होगा कि ऐसे जितने भी माध्यम हैं जिनके स्वरूप को आसानी से बदला जा सकता है (जैसे– मिट्टी) उन माध्यमों को नया स्वरूप देने में बच्चे काफी समय व्यतीत करते हैं एवं नए–नए स्वरूपों का निर्माण करते हैं।

- बच्चों के रचनात्मक कार्य में आनन्द का सहज भाव होता है एवं उसमें उनका एक अपना विचार भी शामिल होता है।

अगर हम ध्यानपूर्वक देखें तो यह सहज ही देख पाएँगे कि बच्चे नए निर्माण में बहुत आनन्द लेते हैं एवं उनकी रचनाओं पर अगर खुलकर बात की जाए तो आपको आश्चर्यजनक तौर पर काफी पेचीदा विचार मिलेंगे। यहाँ बच्चों द्वारा बनाये जाने वाले चित्र बहुत बेहतर उदाहरण हो सकते हैं। सामान्यतः चित्रों पर बात करते समय आप यह पाएँगे कि बच्चे मात्र एक चित्र द्वारा किसी पूरे वक्तव्य या कहानी को अभिव्यक्त करने का प्रयास करते हैं। मात्र एक चित्र द्वारा जितनी बातें वो कहना चाहते हैं वैसा कर पाना हम जैसे वयस्कों के लिए भी चुनौतीपूर्ण कार्य हो सकता है।

- बच्चों की रचनाओं में अपना एक सौंदर्य बोध एवं रोचकता का तत्व होता है।

बच्चे अपनी कृतियों को अपनी दृष्टिकोण के अनुसार रोचक एवं सुन्दर बनाने का प्रयास करते हैं। उन्हें अपनी रचनात्मक अभिव्यक्तियों द्वारा दूसरों का ध्यान आकर्षित करना ज्यादातर पसंद होता है एवं इस हेतु अपनी कृतियों को रोचक एवं अपने अनुसार सुन्दर बनाने का प्रयत्न करते हैं। बच्चे अपनी कृतियों के द्वारा अपने

विचारों एवं भावनाओं को साझा करते हुए एक–दूसरे के साथ जुड़ाव का विकास करते हैं। इस हेतु चाहे संगीत, चित्रकला या कोई भी अन्य विधा जिसके जरिए से वह रचनात्मक कार्य कर रहे हों उसके सम्बन्ध में इसके प्रति भी सजग रहते हैं कि वह बाकी लोगों को कैसी लग रही है।

इन सभी बातों में शायद जो सबसे महत्त्वपूर्ण बात है वह यह है कि ऐसे रचनात्मक अभिव्यक्ति से जुड़े कार्य जहाँ बच्चे अपने अनुसार रचना कर पाएँ वह उन्हें एक आज़ादी का एहसास कराता है। यह एहसास उनके लिए बहुत महत्त्वपूर्ण होता है क्योंकि उसके ज़रिए वे अपनी भावनाओं एवं विचारों को अभिव्यक्त करते हुए मूर्त रूप दे पाते हैं। यह प्रक्रिया उनको खुद को समझने का आधार प्रदान करती है जो उनकी आत्मछवि के विकास हेतु बहुत महत्त्वपूर्ण है या यों कहा जाए कि रचनात्मक एवं कलात्मक अभिव्यक्तियों द्वारा बच्चे खुलकर एवं बेहतर रूप से चिंतन कर पाते हैं शायद इसलिए बच्चे कलात्मक कार्यों में सबसे अधिक रुचि दिखाते हैं।

अगला महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि रचनात्मक एवं कलात्मक पक्षों से जुड़े कार्यों को प्राथमिक कक्षाओं में कैसे करवाया जाना चाहिए? जैसा कि हमने देखा, रचनात्मक अभिव्यक्ति बच्चों की सीखने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग है इसलिए उसे उसी रूप में देखना चाहिए। यहाँ पर हमारे मूल प्रश्न की प्रकृति में एक महत्त्वपूर्ण बदलाव होता है और अगर हम इस बात से सहमत हैं कि रचनात्मक अभिव्यक्ति बच्चों के सीखने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग हैं तो हमारा प्रश्न होना चाहिए कि रचनात्मक एवं कलात्मक अभिव्यक्ति से जुड़े कार्य बच्चों की सीखने की प्रक्रिया के महत्त्वपूर्ण अंग के रूप में कैसे करवाए जाएँ। यहीं पर कला एवं अन्य विषयों के Integrated form (एकीकृत स्वरूप) की अवधारणा हमारे समक्ष उभर कर आती है जो कि इस प्रश्न के संदर्भ में कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत करती है।

इंटीग्रेशन के मायने

सामान्य तौर पर इंटीग्रेशन या एकीकरण शब्द को इस प्रकार प्रयुक्त किया जाता है कि जहाँ एक वस्तु दूसरे में कुछ इस प्रकार शामिल की जा रही हो जहाँ अपनी निजता खोए बिना उनके पृथकता के गुण नगण्य हो जाएँ। अगर हम ध्यानर्वूक देखें तो बच्चे के सीखने की प्रक्रिया में रचनात्मक एवं कलात्मक अभिव्यक्ति कुछ इसी तरह शामिल होती है। इसी आधार पर कला सम्बन्धित कार्यों को अन्य विषयों में जहाँ बच्चा दुनियाँ के बारे में अर्थ निर्माण कर रहा होता है व अपनी समझ बना रहा होता है वहीं या उस ही दौरान एकीकृत रूप में करवाए जाने की बात की जा रही है। इसके मायने हैं कि अन्य विषयों में कार्य करते वक्त सीखने–सिखाने की प्रक्रिया में संगीत एवं कला से सम्बन्धित गतिविधियों का किस तरह सार्थक एवं प्रभावी प्रयोग किया जाये। इस तरह की गतिविधियाँ जहाँ एक ओर बच्चे के रचनात्मक एवं कलात्मक पक्षों को संबोधित करेंगी वहीं दूसरी ओर विषय शिक्षण को भी अधिक रुचिकर बनाएँगी। इस प्रक्रिया में सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इनके ज़रिए बच्चों की भागीदारी बढ़ती है, उनको अपने विचारों को अभिव्यक्त करने एवं मूर्त रूप देने का स्थान प्राप्त होता है, सीखने–सिखाने की प्रक्रिया सही मायनों में गतिविधि आधारित होती है एवं हम विषय के लक्ष्यों से भटके बिना प्रभावी रूप से संज्ञानात्मक कौशलों पर भी कार्य कर पाते हैं।

यह सब कर पाने के लिए हमारे पढ़ाने के तरीकों में कुछ परिवर्तन लाने होंगे। हर विषय में यह देखना होगा कि कहाँ कलात्मक पक्षों से सम्बन्धित सार्थक एवं रोचक गतिविधियाँ करवाई जा सकती हैं। किस प्रकार चित्र बनाना, अभिनय करना, बालगीत और कहानी कहने के द्वारा हम अपने विषय शिक्षण को और प्रभावी एवं

रुचिकर बना सकते है। इस दृष्टि से सारे पाठ्यक्रम को देखना एवं नवीन गतिविधियों का सृजन करना कलाओं के इंटीग्रेशन हेतु प्राथमिक शर्त है। इस संदर्भ में शिक्षक के तौर पर सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि आप भी अपनी झिझक खोलें, थोड़ा गाना, चित्र बनाना एवं कुछ अभिनय को अपनी कार्यशैली का हिस्सा बनाएँ, जब आप भी खुद खुलकर कलात्मक गतिविधियों में बच्चों के साथ शामिल होंगे तो आपके एवं बच्चों के सम्बन्धों में कुछ ऐसे गुणात्मक बदलाव आएँगे जो व्यक्तिगत तौर पर बच्चों पर महत्त्वपूर्ण छाप छोड़ेंगे। उमीद है कि इस प्रक्रिया के ज़रिए आप अपने कक्षा–कक्ष को इतना रोचक बना पाएँ कि बच्चे आपके कालांश का हमेशा इंतजार करें एवं नवीन कृतियाँ बनाते हुए खुशी–खुशी सीख सकें।

सौंदर्य के इस एकीकृत रूप में जिसमें लय, काव्य–कल्पना, काव्य–रचना, धुन–रचना, चित्र–रचना व अभिनय–रचना का सौंदर्य शामिल है के माध्यम से हम उसे अभिव्यक्त व अनुभव कराते हैं, सम्प्रेषण के कलात्मक व सुन्दर रूप का अनुभव कराते हैं और इस अनुभव के माध्यम से हम उसे सौंदर्य के संसार में प्रवेश कराते हैं। सौंदर्य की शिक्षा (Aesthetic Education) शिक्षा के उदात्त लक्ष्यों में से एक है। इन सभी का सौन्दर्य बच्चे में मानवीय मूल्यों के प्रति, नेकी के प्रति, पर्यावरण व प्रकृति के प्रति, पशु–पक्षियों के प्रति सहृदयता उत्पन्न करता है। इनके सौन्दर्य के प्रति सजगता उत्पन्न करता है, जिससे वे संवेदनशील बनते हैं।

सत्र की योजना

सत्र के बारे में वक्तव्य

प्रारंभ में हम सत्र के संदर्भ एवं लक्ष्यों पर संक्षिप्त बातचीत करेंगे एवं सत्र में की जाने वाली गतिविधियों एवं प्रक्रियाओं से प्रतिभागियों को अवगत करवायेंगे।

कला शिक्षा पर प्रस्तुतीकरण

कला शिक्षण पर किए गए प्रस्तुतीकरण के मुख्य बिंदु निम्नलिखित होंगे – (स्लाइड : 1)

- शिक्षा में कला की आवश्यकता।
- प्राथमिक शिक्षा में कला में क्या करवाया जाए।
- प्राथमिक शिक्षा में कला कैसे करवाई जाए।
- बच्चों की कला अभिव्यक्ति को कैसे समझा जाए।

प्रथम स्लाइड द्वारा कला शिक्षा से सम्बन्धित प्रस्तुतीकरण में संबोधित किए जाने वाले मुख्य बिन्दुओं को रखा जाएगा एवं इससे प्रतिभागियों को होने वाले प्रस्तुतीकरण की रूपरेखा भी स्पष्ट होगी।

प्राथमिक शिक्षा में कला का महत्व एवं प्रमुख उद्देश्य – (स्लाइड : 2–5)

प्रस्तुतीकरण की शुरुआत में यह सवाल उठाया जाएगा कि कला की प्राथमिक शिक्षा में क्या आवश्यकता है? NCERT के कला, संगीत, नृत्य और रंगमंच के आधार पत्र में दी गयी सन 2000 में यूनिसेफ के महानिदेशक द्वारा की गयी अपील जिस में संतुलित शिक्षा और शिक्षा में कला की आवश्यकता के बारे में कथन दिया गया है, पर बातचीत के बाद राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा 2005 में निहित कला के शिक्षा में उद्देश्यों पर बात होगी

जिसके बाद सम्भागियों द्वारा आने वाले प्रश्नों/बिन्दुओं पर समूह के साथ चर्चा की जाएगी। इस चर्चा में संभवतः कुछ ऐसे क्षेत्र उभर कर आएँगे जिन क्षेत्रों पर कला काम करती है। इन क्षेत्रों पर बात करते हुए सम्बन्धित स्लाइड के साथ चर्चा की जाएगी।

प्रस्तुति में यह भी बताया जाएगा कि शिक्षा के और समग्र व्यक्तित्व विकास के कौन–कौन से ऐसे क्षेत्र हैं जिन को कला प्रभावित करती है, जिससे कि यह समझ बन सके कि कला शिक्षा बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण में किस प्रकार सहायक है। चर्चा के वक्त समय का ध्यान रखना काफी आवश्यक है और फैसिलिटेटर इस बात का भी ध्यान रखें की चर्चा बिंदु से ना भटके।

प्राथमिक शिक्षा में कला में क्या करवाया जाए – (स्लाइड : 6)

इस भाग के अंतर्गत इस बिंदु पर बात की जाएगी कि कला के दो भाग यानी कि दृश्य कला और प्रदर्शनकारी कला/दृश्य कला के अंतर्गत चित्रकला (painting) एवं शिल्प (मूर्ति) कला और प्रदर्शनकारी कलाओं के अंतर्गत संगीत नृत्य और नाट्य कला स्कूलों में करवाई जा सकती है। यहीं से सत्र कला के बाकी विषयों के साथ एकीकरण की ओर भी मुड़ेगा जब यह बताया जाएगा कि कला को करवाने के दो तरीके हैं– एक तो कला पृथक विषय के रूप में और दूसरा बाकी विषयों के साथ एकीकरण (integration) में। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा 2005 कला को प्राथमिक स्तर पर बाकी विषयों के साथ एकीकृत (integrate) कर पढ़ाने पर जोर देता है।

इस भाग में आगे कला और उसके बाकी विषयों के साथ एकीकरण पर सीधी बात की जाएगी। इस बात पर चर्चा होगी कि एकीकरण क्यूँ और कैसे होना चाहिए। समय–समय पर प्रतिभागियों को चर्चा में अपनी बात कहने के अवसर देकर उनकी भागीदारी को सुनिश्चित करना चाहिए। स्तम्भ के के रूप में, इस हिस्से में कला और विषयों के एकीकरण पर हुए कुछ शोध–परक अध्ययनों का भी सहारा लिया जाएगा, जिससे अपनी बात की वैधता अधिक स्पष्ट हो पाए।

प्राथमिक शिक्षा में कला को कैसे करवाया जाए – (स्लाइड : 7–10)

बच्चों की कला अभिव्यक्ति को कैसे समझा जाए– प्रस्तुतीकरण के इस भाग में तीन मुद्दों पर बातचीत होगी :

- **कला को कैसे समझें –** यह बताया जाएगा कि बच्चे को प्रोत्साहन की कितनी आवश्यकता होती है। बच्चे की कला में कमी का होना उसकी आयु विशेष की अभिव्यक्ति की ख़ासियत है इसीलिए उसे कमी के रूप में नहीं आँकना चाहिए। बच्चों की कला के प्रति अध्यापक को संवेदनशील होने, कला से बच्चों को आनंदानुभूति होने और कौशल की अपेक्षा रुचि, संलग्नता, सहज अभिव्यक्ति एवं कला में सहभागी होने की प्रक्रिया के देखे जाने पर बात भी इस सत्र के अहम हिस्से में से एक हैं।

- **कला का आकलन कैसे करें –** इस भाग में बताया जाएगा कि कला का आकलन सतत् एवं निरंतर होना चाहिए एवं किसी परीक्षा या प्रतियोगिता पर आधारित नहीं होना चाहिए, अगर कला बाकी विषय के साथ एकीकृत कर के पढ़ाई जा रही हो तो उस विषय के सूचकों के आधार पर बच्चे की प्रगति देखी जानी चाहिए और कला के सूचकों पर बच्चे की कला में प्रगति देखी जानी चाहिए।

- **किन बातों का ध्यान रखें –** इस भाग में इस बिंदु पर बात होगी कि कला का आकलन करते वक्त एवं उस प्रक्रिया से गुजरते वक्त किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिए। इस विषय के तहत बच्चे को अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करने से, समूह में गतिविधियाँ करवाने, मुक्त अभिव्यक्ति पर बल देने, बच्चे के विचार को समझने और अपना दृष्टिकोण बच्चे पर ना थोपने तक पर प्रमुखता से ध्यान दिलाया जाएगा।

इस विषय पर समझ बनाने के लिए प्रस्तुतीकरण के बाद 3 कलाओं यानी दृश्य कला, नाट्य कला और संगीत कला की 1–1 गतिविधि के द्वारा समझ बनाने पर काम किया जाएगा।

शिक्षा में दृश्य कला एक गतिविधि

सत्र के इस भाग में चित्र का उदाहरण देकर चित्र कला और शिक्षा क एकीकरण की बात की जाएगी। चित्र मनुष्य की अभिव्यक्ति का माध्यम रहे हैं व पाठ्य–पुस्तकों में चित्र होने की क्या आवश्यकता रही है पर चर्चा केन्द्रित करते हुए सत्र का आरम्भ होगा। सत्र की शुरुआत में कुछ पुरानी गुफा चित्र दिखाए जाएँगे और उनसे निकल कर आने वाले मायनों पर चर्चा की जाएगी। धीरे–धीरे मनुष्य की अभिव्यक्ति में आए परिवर्तन को समझाने के लिए लोक कला के भित्ति चित्रों से समझाया जाएगा और आखिर में किताबों में व्याप्त चित्रों पर बात की जाएगी। शुरुआती चर्चा का मुख्य बिंदु रहेगा कि आप इस चित्र से क्या समझते हैं? एक ही चित्र की अलग–अलग व्याख्या की विविधता की गुंजाइश रहेगी।

आखिरी चित्र, यानी किताब के चित्र के साथ इस बिंदु पर बात की जानी चाहिए कि इस चित्र में आप क्या–क्या देख सकते हैं? इससे क्या समझते हैं? बच्चों से इस चित्र पर क्या बात करनी चाहिए? और आखिर में इसे किस–किस विषय में किस तरीके से उपयोग में लाया जा सकता है। हमारा लक्ष्य रहेगा कि आखिरी चित्र पर चर्चा तक प्रतिभागियों में कला और शिक्षा के एकीकरण के ऊपर अच्छी समझ बन जाए।

शिक्षा में नाट्य कला

सत्र के इस हिस्से में कहानी कहने का उदाहरण लेते हुए नाट्य कला और शिक्षा के एकीकरण पर समझ बनायी जाएगी। फेसिलिटेटर द्वारा हाव–भाव का पूरा इस्तेमाल करते हुए कुछ विषयों की अवधारणाओं को मिला कर एक कहानी कही जाएगी। कहानी की शुरुआत के पहले ही प्रतिभागियों को गतिविधि में बच्चों की तरह भाग लेने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। कहानी सुनाते वक्त प्रतिभागियों की प्रतिक्रियाओं को जगह देना आवश्यक है क्यूँकि हल्की चर्चा भी प्रक्रिया का हिस्सा है परन्तु इस बात का ध्यान रहे कि बिंदु से ना फिसला जाए और कहानी का ज़ायका बरकरार रहे।

कहानी के पूर्ण होने के बाद इस बात पर चर्चा की जाएगी कि किस–किस विषय की किस–किस अवधारणा पर अभी कहानी से काम हुआ और किन–किन विषयों की अवधारणाओं पर आगे और अलग–अलग तरीकों से काम हो सकता है। इस चर्चा के अंत तक प्रतिभागियों की नाटक और बाकी विषयों के एकीकरण के ऊपर एक अच्छी ऊपरी समझ बननी अपेक्षित है।

शिक्षा में संगीत कला

इस सत्र में योजना के तहत 3 बाल–गीतों का चुनाव किया जाएगा जिसमें से एक किताब से उठाया हुआ, एक अर्थहीन शब्दों से मिलाजुला और एक कहानी के रूप में गीत होना चाहिए। हर बाल–गीत के साथ संगीत और शिक्षा के एकीकरण पर बातचीत होगी, जैसे कि अर्थहीन गीत किस तरीके से पैटर्न की समझ विकसित करने में एवं अर्थहीन शब्दों व वाक्यों की अनवरत, स्वतःस्फूर्त कल्पना के खेल की रचनात्मक सम्भावना को आमंत्रित करने में कारगर हो सकते हैं, पहाड़ों को गा के बच्चों द्वारा याद करना भी इसी अवधारणा का उदाहरण है। इस बात पर भी चर्चा होगी कि गाकर किस तरह कहानी का लॉजिक (Logic) विकसित किया जा सकता है। किताब के गीत को गाने के पीछे लक्ष्य यह समझाना है कि पाठ्य–पुस्तक की कविताओं को भी गाया जा सकता है और कविता को गाकर पढ़ाने से पढ़ाना और समझाना कितना सरल और प्रभावी हो जाता है। बाल गीत को अभिनय के साथ गाए जाने का बाल केन्द्रित विधा एवं विषय के साथ एकीकरण की दृष्टि से क्या महत्त्व है इस पर बात के साथ ही इस सत्र में संगीत के भाषा के साथ सम्बन्ध पर भी चर्चा की जानी अति आवश्यक है।

इस सत्र के अंत में तीनों कलाओं के विषयों के साथ एकीकरण, उन्हें कैसे करवाया जाए, क्यूँ करवाया जाए पर प्रतिभागियों की अच्छी समझ बननी अपेक्षित है।

सुझाव एवं सावधानी

- कला अभिव्यक्ति का एक माध्यम है इसलिए सत्र में चर्चा होनी आवश्यक है परन्तु उन चर्चाओं का सही दिशा में ले के जाना उससे भी ज्यादा आवश्यक है।
- प्रतिभागियों की गतिविधियों में भागीदारी को सुनिश्चित रखने का ध्यान रखना आवश्यक है।
- फैसिलिटेटर साथ दी गयी प्रस्तुति (power point presentation) को सहायता के लिए भरसक इस्तेमाल करे और अपने वक्तव्य में उसके साथ तादात्म्य का ख़ास ध्यान रखे।

प्राथमिक शिक्षा में कला कार्य एवं सौंदर्य बोध शिक्षण का महत्त्व पर प्रस्तुतीकरण

कला सत्र के मुख्य बिन्दु – **स्लाइड–1**

कला क्यूँ होनी चाहिए –

कला– एक प्राकृतिक माध्यम **स्लाइड–2**

- बच्चे अपनी प्रकृति से ही रचनात्मक होते हैं– प्रत्येक बच्चा रचने के सामर्थ्य के साथ पैदा हुआ है।
- बच्चे रचनात्मक रूप से खोजबीन करते हुए सीखते हैं।
- सीखने के विविध कौशल पहले से बच्चों में होते हैं– प्रश्न करने, जाँच करने, खोजने, काम करने, प्रयोग करने एवं खेलना।
- स्वयं की खोज एवं स्वयं को अभिव्यक्त कर पाना और जगत की खोज एवं उसे समझना।
- कलाओं के अनुभव महसूस करने व सीखने के भिन्न रूपों व तरीकों को आमंत्रित करते हैं।
- कला के माध्यम से बच्चे बेहतर और तेज़ी से भी सीखते हैं।
- कला की अपनी समझ को विविध तरीकों से व्यक्त करने के लिए बच्चों को माध्यमों, तकनीकों व कौशलों की विस्तृत रेंज उपलब्ध कराती है।

स्लाइड–3

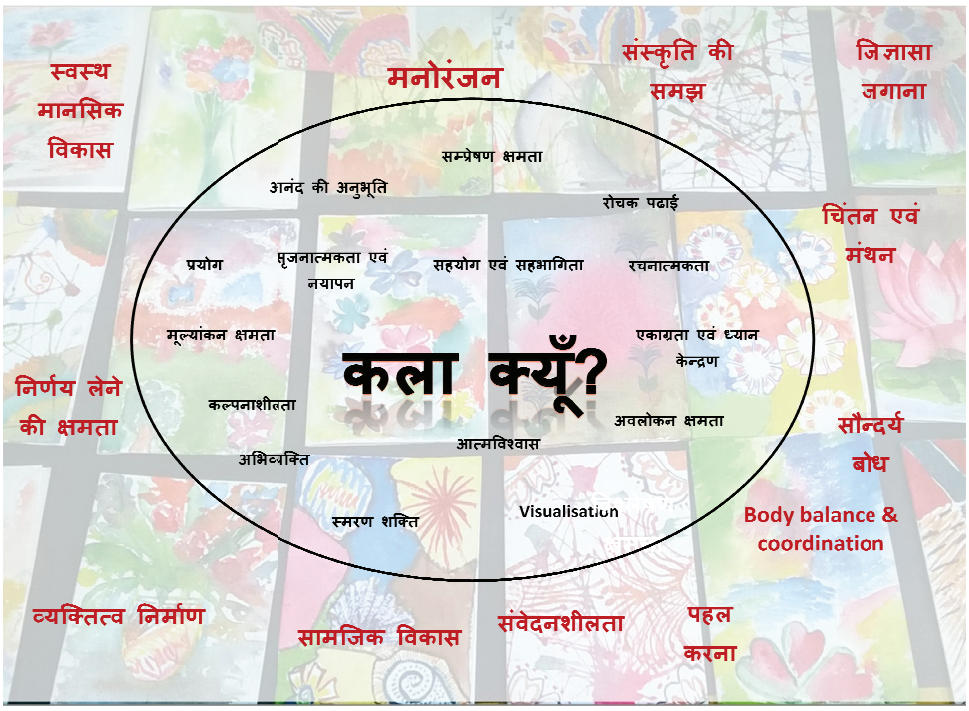

नोट : गोले के अन्दर दिए गए क्षेत्र कला शिक्षा से सीधे तौर पर सम्बन्धित है और गोले के बाहर दिए गए क्षेत्र समग्र व्यक्तित्व विकास से सम्बन्धित हैं।

यूनेस्को के महानिदेशक की अपील (सत्र–2000) स्लाइड–4

- अब एक अधिक संतुलित शिक्षा की आवश्यकता है जहाँ विज्ञान, तकनीक और खेल सम्बन्धी विषयों के साथ मानव विज्ञान और कला शिक्षा भी शिक्षा के हर स्तर पर क़दम से क़दम मिलाकर चले। जिसके दौरान बच्चे और किशोर ऐसी सीखने की प्रक्रिया में भाग लें जो उनके लिए फायदेमंद हो ओर उनमें बौद्धिक और भावनात्मक संतुलन बनाए रखे। ऐसे परिप्रेक्ष्य में खेल क्रियाएँ सृजनात्मकता को सजीव बनाने का एक ऐसा कारक हैं जिसे कला की शिक्षा में प्रोत्साहन की ज़रूरत है। कला शिक्षा शरीर के साथ–साथ मस्तिष्क को भी प्रेरित करने वाले होनी चाहिए। भावनाओं को गति प्रदान कर यह मस्तिष्क का विकास करती है। यह स्मृति बढ़ाती है जिससे संवेदनशीलता तीक्ष्ण होती है और वे अन्य विषयों के ज्ञान को प्राप्त करने के लिए सक्षम बनते हैं। मुख्य रूप से विज्ञान के लिए यह रचनात्मक योग्यताओं का विकास करती है और उनके आवेग को उनके मनपसंद कार्यों को करने की ओर मोड़ती है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा–2005 स्लाइड–5

- कला संज्ञानात्मक, भावनात्मक और अभिव्यक्ति वाले क्षेत्रों के साथ अन्तःक्रिया करने वाली प्रक्रियाओं को अर्थ देती है।
- **कला के उद्देश्य –**

- अवलोकन, खोजबीन करने और अभिव्यक्ति के माध्यम से बच्चों की सभी इन्द्रियों को/बोध को/ज्ञान को विकसित करना।
- जीवन के भिन्न–भिन्न पहलुओं के प्रति बच्चों को अपने विचार, भावनाएँ अभिव्यक्त करने के अवसर देना।
- परिवेश में जो कुछ भी सुन्दर और अच्छा है उसके प्रति बच्चों को integration पद्धति द्वारा जागरूक करना; उस सुन्दरता का लाभ/आनंद उठाने के प्रति उत्सुकता पैदा करना।

कला में किन विधाओं द्वारा कार्य करवाया जा सकता है ? **स्लाइड–6**

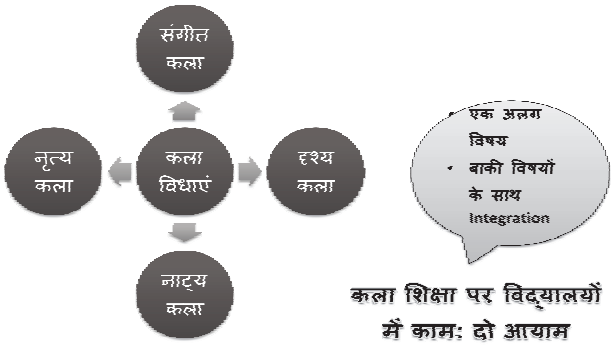

कला विधाएं – दृश्य कला एवं प्रदर्शनकारी कला

कैसे करवाएं कला – **स्लाइड–7**

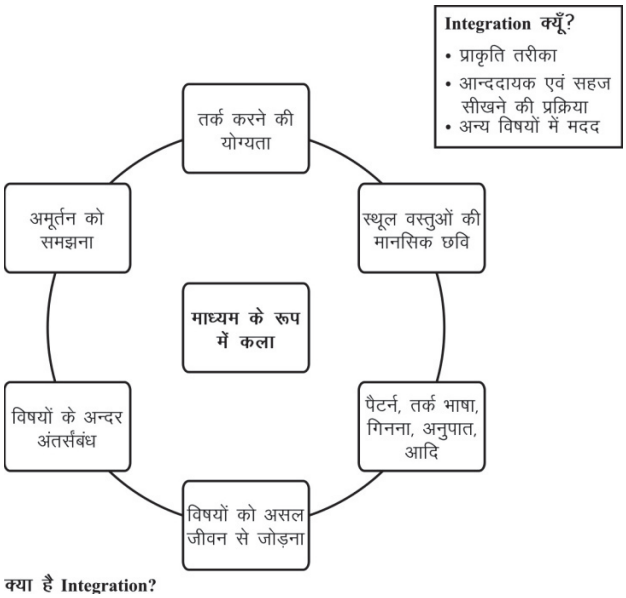

क्या है Integration?

बच्चों की कला अभिव्यक्ति को कैसे समझें ? **स्लाइड–8**

- प्रमाण, परिप्रेक्ष्य, यथार्थ चित्रण एवं रंगांकन, आदि का अभाव होना प्राथमिक आयु वर्ग के बच्चों की कला अभिव्यक्ति की विशेषता है।
- बच्चों के साथ स्वतः स्फूर्त अभिव्यक्ति बहुत अच्छी तरह निकल कर आती है।

- इस आयु वर्ग के बच्चों में कला कौशल के स्थान पर रुचि, संलग्नता, अभिव्यक्ति एवं कला प्रक्रिया को देखा जाना चाहिए।
- बच्चों की अभिव्यक्ति में विविधता को प्रोत्साहन दें।
- बच्चे का सृजन उसके परिवेश से जुड़े अनुभव, ज्ञान और समझ को ही प्रतिबिंबित करता है।

कला का आकलन **स्लाइड–9**

- गुणात्मक और प्रक्रिया आधारित।
- प्रतियोगिता एवं परीक्षा आधारित नहीं।
- कक्षा–कक्षीय प्रक्रियाओं में कलात्मक कार्य के दौरान (निरंतर और व्यापक)।

कला आकलन के महत्त्वपूर्ण पक्ष एवं सूचक

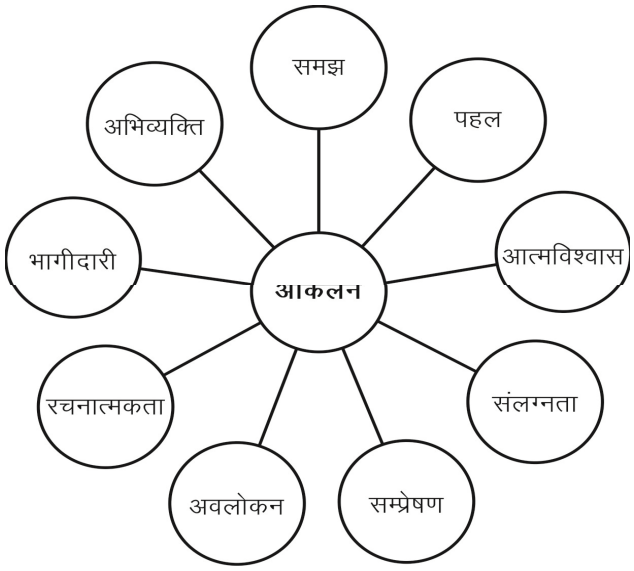

कला शिक्षण एवं आकलन में किन बातों का ध्यान रखें **स्लाइड–10**

- बच्चों की अभिव्यक्ति को समूह में देखा जाना चाहिए किन्तु बच्चे की व्यक्तिगत अभिव्यक्ति कि विद्यालय द्वारा पहचान की जानी चाहिए।
- अनिच्छा होने पर बच्चों को अभिव्यक्ति के लिए बाध्य ना किया जाए।
- इस अवस्था में ज़ोर बच्चे की मुक्त अभिव्यक्ति पर दिया जाना चाहिए।
- प्राथमिक आयु वर्ग में कला शिक्षण में पुनरावृत्ति (दोहरान) एवं अभ्यास अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।
- शिक्षक को बच्चे की अभिव्यक्ति समझने की तरफ प्रयास करना चाहिए ना कि अपना एवं दृष्टिकोण थोपना चाहिए क्यूँकि बच्चों और वयस्कों की कला दृष्टि में अंतर होता है।
- बच्चों की अभिव्यक्ति में शिक्षकों को उनके विचारों को समझने की चेष्टा करनी चाहिए।
- आकलन प्रक्रिया को इस प्रकार नियोजित किया जाये कि बच्चों की अभिव्यक्ति के विकास को स्पष्ट रूप से देख व समझ पाएँ।

परिप्रेक्ष्य विकास सत्र–6 समावेशी शिक्षा*

उद्देश्य :

1. समावेशी–शिक्षा की अवधारणा की स्पष्टता का विकास।
2. विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों की पहचान के आधारों को समझना व उनसे जुड़ी विशेषताओं को समझना।
3. विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के साथ शिक्षण–आकलन के विशिष्ट तरीकों पर समझ बनाना।

प्रक्रिया :

1. पहले संदर्भ व्यक्ति सभी संभागियों से यह चर्चा करेंगे कि क्या उनके विद्यालय में वर्तमान में या पूर्व में विशेष आवश्यकता वाले बच्चे रहे हैं? उनके साथ कार्य करने के कैसे अनुभव रहे हैं?
2. इसके उपरान्त संदर्भ व्यक्ति शिक्षा के अधिकार अधिनियम के संदर्भ में समावेशित शिक्षा के बारे में बात करें व यह चर्चा करें कि जहाँ तक संभव हो, सभी बच्चों के साथ एक ही विद्यालय के माध्यम से कार्य होने की आवश्यकता क्यों उचित है।

गतिविधि : प्रशिक्षक समूह को छोटे अनुलग्नकों का अध्ययन कर उन पर चर्चा करने को प्रोत्साहित करेंगे व बड़े समूह में चर्चा से निकले बिन्दुओं का प्रस्तुतीकरण किया जाएगा।

चर्चा में निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान दें –

1. विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान कैसे की जा सकती है?
2. सीखने–सिखाने व कक्षा संबंधी विशिष्ट ज़रूरतें क्या हैं?
3. शिक्षक समावेशी रूप में सभी को मदद करते हुए, कैसे कार्य कर सकते हैं?
4. उन बच्चों के साथ कार्य करने हेतु, किस तरह की सामग्री की उपलब्धता आवश्यक है।

*** यह सत्र एसआईईआरटी के शिक्षक प्रशिक्षण मॉड्यूल–2016 से साभार लिया गया है।**

शिक्षा का सार्वजनीकरण एवं समावेशित शिक्षा

शिक्षा के सार्वजनीकरण का तात्पर्य यह है कि 6 से 14 वर्ष के आयु वर्ग के प्रत्येक बालक–बालिका को शिक्षा से जोड़ा जा सके। कोई भी शिक्षा से वंचित नहीं रह पाये इसके लिए किए जा रहे प्रयासों के तहत एक बड़ा वर्ग जो ध्यान में रखने योग्य है और वह है– विशेष आवश्यकता वाले बालक–बालिका।

ऐसे बालक–बालिकाएँ हमारे समाज का एक महत्त्वपूर्ण अंग हैं। जिन्हें अलग भी नहीं किया जा सकता। इन बालक–बालिकाओं को सामान्य बालक–बालिका के साथ शिक्षा दी जा सके इसके लिए शिक्षक की अनुकूल सोच बनना ज़रूरी है ताकि वे बच्चों को शिक्षा की मुख्य धारा के साथ जोड़ सकें।

कक्षा कक्ष एवं विद्यालय में ऐसे बालक–बालिकाएँ भी आते हैं जिनकी ज़रूरतें भी विशेष प्रकार की होती हैं। इन बालक–बालिकाओं की क्षमता में भिन्न्ता होती है। कुछ बालक–बालिकाएँ बहुत देरी से तथा विशेष उपकरणों की सहायता से ही सीख पाते हैं। कुछ बालक–बालिकाएँ सामान्य बालक–बालिकाओं की भाँति गतिविधियों को भी नहीं कर पाते हैं।

शारीरिक अथवा मानसिक दृष्टि से अपूर्णता या असमर्थता जिस भी व्यक्ति को किसी भी रूप में सामान्य क्रियाओं में भाग लेने से रोकती है या फिर सीमित करती है विशेष आवश्यकता कहलाती है।

समावेशित शिक्षा का आशय विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को ऐसा वातावरण प्रदान करना जिसमें उनकी सीखने की प्रक्रिया में कम से कम बाधाएँ रह जाएँ। ये कक्षा के अन्य बालकों की भांति ही सीख, समझकर आगे बढ़ें और उनका समुचित विकास हो।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान

विशेष आवश्यकता वाले बालक–बालिकाओं का पर्याप्त विकास नहीं हो पाता है। साथ ही ये विकास की मुख्य धारा से नहीं जुड़ पाते हैं। विशेष आवश्यकता इन बालक–बालिकाओं को अन्य बालक–बालिकाओं के समूह से अलग कर देती है। सहज स्वाभाविक गतिविधियों में भाग नहीं ले पाने की स्थितियों में इन विशेष आवश्यकता वाले बालक–बालिकाओं में हीन भावना घर कर जाती है।

शिक्षक यह समझें कि बालक–बालिकाओं की विशेष आवश्यकता का स्वरूप क्या है? तथा किस हद तक विशेष आवश्यकता है। विशेष आवश्यकता की पहचान के आधार निम्नलिखित हैं–

1. दृष्टि संबंधी
2. श्रवण संबंधी
3. मानसिक विमंदन संबंधी
4. अस्थि (आंगिक) संबंधी
5. सीखने संबंधी

*** साभार : समझ–पत्र, राजस्थान प्रारंभिक शिक्षा परिषद्, जयपुर।**

6. सेरेब्रल पाल्सी संबंधी
7. ऑरिज्म संबंधी
8. प्रोफॉउण्ड स्तर के मानसिक विमंदन संबंधी

विशेष आवश्यकता की पहचान के लिए उपरोक्त आधारों पर बालक की विशेष आवश्यकता को अंकित किया जाए। इसके लिए परिशिष्ट की मदद ली जा सकती है।

विशेष आवश्यकता जो किसी भी प्रकार की हो, कितनी भी मात्रा में हो मानव व्यक्तित्व को सीधे रूप से प्रभावित करती है। विशेष आवश्यकता वाले बालक–बालिकाओं का विकास पर्याप्त अवसरों के अभाव में अवरुद्ध हो जाता है।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चे और कक्षा प्रक्रियाएँ

सामान्य अनुभव आधारित तथ्य यह है कि कक्षा में बालक–बालिकाओं के सीखने संबंधी योग्यता का स्तर पृथक–पृथक होता है। कक्षा में कुछ ऐसे बालक भी होते हैं जिन्हें सिखाने के लिए विशेष अधिगम सामग्री व अध्यापकों से विशेष सहायता की आवश्यकता होती है।

मानसिक योग्यता का निम्न स्तर, विकास में विलम्ब, देखने, सुनने व बोलने में कठिनाई, माँसपेशियों की क्षति, अंग की विकृति आदि विशेष आवश्यकता वाले बालक–बालिकाओं में होती है।

जिस प्रकार विशेष आवश्यकता वाले बालक–बालिकाओं की आवश्यकताएँ भिन्न–भिन्न तरह की होती हैं उसी प्रकार उन्हें सीखने के लिए भी अधिगम सामग्री भिन्न–भिन्न प्रकार की होती है।

विशेष आवश्यकता वाले बालक–बालिकाओं में किसी एक या उससे अधिक प्रकार की विशेष आवयकता हो सकती है। बच्चे की विशेष आवश्यकता के कारण उसकी समस्याएँ भी विविधता लिए हुए हो सकती हैं। इन समस्याओं के अनुरूप उसकी दिक्कतें उसकी शिक्षा में बाधक नहीं बनें इसके लिए उसकी ज़रूरतें भी अलग तरह की होंगी।

– सामान्य बालकों के साथ पढ़ाने के महत्त्व को समझना।
– सहयोगात्मक विशिष्ट व्यवहारों को अपनी शिक्षण प्रक्रियाओं में ध्यान देना।
– समय पर उत्साहित करना एवं शिक्षण की अन्तःक्रिया में भागीदार होने के लिए उत्प्रेरित करना।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के साथ काम करने के दौरान ध्यान रखने योग्य बातें –

प्रवेश के समय प्रत्येक बालक–बालिका की निःशक्तता और अशक्तता की जाँचकर प्रत्येक बालक के बारे में जानकारी प्राप्त कराई जाएगी। यदि वह विशेष आवश्यकता वाला बालक बालिका है तो उसकी विशेष आवश्यकता किस प्रकार की है? जानकारी प्राप्त करते समय सम्बन्धित बालक को यह अहसास नहीं होना चाहिए कि उसकी अशक्तता को देखा जा रहा है। ऐसा करने से कक्षा में विशेष आवश्यकता वाले बालक बालिका की पहचान हो जाएगी और उनके लिए कक्षा में बैठने की समुचित व्यवस्था की जा सकेगी।

प्रवेश पंजिका में विशेष आवश्यकता वाले बालक–बालिका के सामने सम्बन्धित विशेष आवश्यकता का उल्लेख कर दिया जाए जिसका पता सम्बन्धित छात्र को नहीं रहे।

शारीरिक अथवा मानसिक दृष्टि से अपूर्णता या असमर्थता जो भी व्यक्ति को किसी भी रूप में सामान्य क्रियाओं में भाग लेने से रोकती है या फिर सीमित करती है विशेष आवश्यकता कहलाती है।

- निःशक्तता किसी भी प्रकार की हो और किसी भी मात्रा में हो वह व्यक्तित्व को प्रभावित करती है।
- ऐसे विशेष आवश्यकता वाले बालकों में हीन भावना भरी रहती है और स्वाभिमान की कमी हो जाती है।
- इसी भावना को ध्यान में रखते हुए विशेष आवश्यकता वाले बालक–बालिकाओं के लिए समेकित शैक्षिक योजना की अवधारणा का विकास हुआ है।
- समावेशित शिक्षा व्यवस्था में विशेष आवश्यकता वाले बालकों का सामान्य बालकों के साथ ही शिक्षण देने का प्रावधान है।
- इस व्यवस्था में समान पाठ्यपुस्तक, एक सी पाठयपुस्तक और वही शिक्षक होता है अन्तर केवल उनकी बैठक व्यवस्था में होगा।
- शैक्षिक उपकरणों की सुविधाजनक पहुँच की व्यवस्था, शिक्षण सामग्री का अनुकूलन और शिक्षण तकनीक में शिक्षक का विशेष सहयोग अधिक आवश्यकता वाले बालकों को प्रोत्साहन प्रदान करना हो।

विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान करने हेतु आवश्यक जाँच तालिका

(क) दृष्टि सम्बन्धी **हाँ/नहीं**

1. क्या बच्चे की आँखों में बार–बार पानी भर आता है। ( )
2. क्या बच्चे की आँखों में स्पष्ट दृष्टिगत होने वाली विकृति है। ( )
3. क्या बच्चे की आँखें बार–बार लाल हो जाती हैं। ( )
4. क्या बच्चा बार–बार आँखें मलता रहता है। ( )
5. क्या बच्चा आँखें मिचमिचाता है। ( )
6. क्या बच्चा आँखों में बार–बार दर्द की शिकायत करता है। ( )
7. क्या बच्चा सिर नीचे की ओर करके चलता है। ( )
8. क्या बच्चा एक आँख को ढककर आगे की ओर चलता है। ( )
9. क्या बच्चा बार–बार केवल एक ही आरे से ऐसी वस्तुओं से टकराता है जो कमर तक ऊँची हैं और घुटनों से नीची हैं। ( )
10. क्या बच्चा बहुत पास से पढ़ता है। ( )
11. क्या बच्चा श्यामपट्ट से नोट उतारते समय दूसरे बच्चों से बार–बार पूछता है। ( )
12. क्या बच्चा सूक्ष्म कार्य करते समय सिर दर्द की शिकायत करता है। ( )
13. क्या बच्चा पढ़ने–लिखने का काम करने के बाद आँख में दर्द की शिकायत करता है। ( )

(ख) श्रवण सम्बन्धी

1. क्या बच्चे के कान/कानों में कोई दोष दिखाई देता है ( )
2. क्या बच्चा प्राय कान में दर्द की शिकायत करता है। ( )
3. क्या बच्चे का एक कान या दोनों कान बहते हैं। ( )
4. क्या बच्चा प्रायः कान खुजलाता है। ( )
5. क्या बच्चा बार–बार अपना सिर पकडता है। ( )
6. क्या बच्चा सुनते समय शिक्षक के चेहरे को आँख गड़ाकर देखता है जिससे कही बात का अंदाज लगा सके। ( )
7. क्या बच्चा नोट लिखते समय प्रायः पास बैठे बच्चे की नोटबुक पर बार–बार नज़र डालता है। ( )

(ग) बोलने सम्बन्धी

1. क्या बच्चे के मुंह में स्पष्ट दिखाई पड़ने वाली विकृति है। ( )
2. क्या बच्चा प्रायः अटक–अटक कर बोलता है। ( )
3. क्या बच्चा बोलते समय शब्दों में कुछ ध्वनियों को छोड़ देता है। ( )
4. क्या बच्चा हकलाता है। ( )

5. क्या बच्चा शिक्षक द्वारा सुधार के बावजूद प्रायः गलत उच्चारण करता है जिससे समझने में कठिनाई होती है। ( )
6. क्या बच्चे से बात करते समय उसकी बातों को समझ पाना कठिन है। ( )
7. क्या बच्चा किसी एक वर्ण का उच्चारण गलत करता है। ( )

(घ) अंग सम्बन्धी

1. क्या बच्चे के निम्नलिखित अंगों में से किसी एक में सहज ही दिखाई पडने़ वाली विकलांगता है.

– गर्दन में ( )
– हाथों में ( )
– अंगुलियों में ( )
– कमर में ( )
– टांगों में ( )
– होंठों में ( )

2. क्या बच्चे को कठिनाई होती है.

– बैठने में ( )
– खड़े होने में ( )
– चलने–फिरने में ( )

3. क्या बच्चा झटक के फिर चलता है ( )
4. क्या बच्चे के शरीर के अंग अनजाने ही संचालित होते हैं। ( )
5. क्या बच्चे का कोई अंग कटा हुआ है। ( )

(ङ) निम्न बौद्धिक स्तर

1. क्या बच्चे को अपनी उम्र के बच्चों की तुलना में कुछ सीखने में अधिक कठिनाई मालूम होती है।( )
2. क्या बच्चों को अपने आप खाने, कपड़े पहनने, नहाने, तैयार होने जैसे कार्यों में कठिनाई होती है। ( )
3. जब आप बच्चे को कोई काम करने को कहते हैं तब ऐसा लगता है कि उसे आपकी बात समझने में कठिनाई हो रही है। ( )
4. क्या बच्चा अपनी उम्र के अन्य बच्चों की तुलना में मंद या धीमा मालूम पड़ता है। ( )
5. क्या बच्चे को अर्मूत बातों को समझने में कठिनाई होती है। ( )
6. अपनी उम्र के बच्चों की अपेक्षा क्या बच्चे में कोई चीज सीखने के लिए अधिक आवृति तथा अभ्यास की आवश्यकता होती है। ( )
7. अपनी उम्र के अन्य बच्चों की तुलना में क्या बच्चे को कोई कौशल या काम सीखने में अधिक समय लगता है। ( )

8. क्या बच्चा सीखने के लिए ठोस उदाहरणों पर बहुत अधिक निर्भरता दर्शाता है। ( )
9. क्या बच्चा अपनी उम्र के बच्चों की भांति कक्षा–कक्ष के अधिक से अधिक क्रियाकलापों में भाग लेता है। ( )

(च) सीखने सम्बन्धी.

1. क्या बच्चा पर्याप्त रूप से भली प्रकार पढ़ नहीं पाता है यद्यपि उसके मौखिक उत्तर बुद्धिमत्तापूर्ण होते हैं। ( )
2. क्या बच्चा शब्दों में अक्षर छोड़ते हुए वर्तनी की अशुद्धियाँ करता है (जैसे– कमल के स्थान पर कल लिखता है। ( )
3. क्या बच्चा शब्दों में अक्षरों के स्थान बदल कर वर्तनी की अशुद्धियाँ करता है। ( )
4. क्या बच्चा बार–बार इतना उत्तेजित हो जाता है कि वह कोई काम पूरा करने में असमर्थ रहता है। ( )
5. क्या बच्चा पढने़ में बार–बार शब्दों या पंक्तियों को छोड़ देता है। ( )
6. क्या बच्चा शब्दों में एक–एक अक्षर को पढ़ता है किन्तु अक्षरों के एक साथ सम्मिलित ध्वनि के साथ पढ़ने में कठिनाई अनुभव करता है। ( )
7. पढ़ते समय क्या बच्चा शब्दों का अनुमान लगाता है। ( )
8. लिखते समय क्या बच्चा भद्दे ढंग से लिखता है और सीधी पंक्ति में लिखने में विफल रहता है। ( )
9. क्या बच्चा परीक्षा में अच्छा प्रदर्शन नहीं करता है यद्यपि वह बुद्धिमान है तथा कोई शारीरिक निःशक्तता भी नहीं है। ( )
10. क्या बच्चा अनमना सा दिखाई देता है और बार–बार समय सारणी को भूल जाता है। ( )

परिप्रेक्ष्य विकास सत्र–7 जेण्डर संवेदनशीलता

उद्देश्य :

- विद्यालय के वातावरण एवं अध्ययनरत बच्चों को संवेदन बनाने के तरीके समझ सकेंगे।
- निर्णय प्रक्रिया में समान रूप से लड़के एवं लड़कियों की भागीदारी सुनिश्चित कर पाने के तरीके समझ सकेंगे।
- विद्यालय में लड़कियों के ड्रॉप आउट्स के कारणों पर चर्चा करते हुए ठहराव को सुनिश्चित करने के तरीकों पर समझ बना सकेंगे।

चर्चा के बिन्दु :

- जेण्डर से सम्बन्धित आंकड़ों को दर्शाते हुए चर्चा करना।
- वर्तमान में जेण्डर सम्बन्धित मुद्दे पर सरकार द्वारा कौन–कौन सी प्रस्तावित योजनाएँ उपलब्ध कराई जा रही हैं?
- विद्यालय में लड़कियों के ठहराव को सुनिश्चित करने के लिए क्या–क्या बदलाव करने की आवश्यकता है।
- वर्तमान परिदृश्य में लड़के व लड़कियों में किन आधारों पर असमानताएँ की जा रही हैं ?
- विद्यालय एवं परिवार में निर्णय लेने की प्रक्रिया में इन लड़कियों की भागीदारी को कैसे सुनिश्चित कर सकते हैं ?

गतिविधि–1 : जहाँ प्राइमरी कक्षाओं में (1–5) नामांकन में बढ़ोत्तरी हुई है एवं एक स्थिरता की स्थिति बनी है वहीं लैंगिक समानता बहुत कम भी हुई है। यह देखा जा सकता है कि प्राथमिक स्तर में GER-108 एवं उच्च प्राथमिक में 82 है। इन आँकड़ों में बहुत अन्तर है। किन्तु सामान्यीकरण करने पर शोधों के अनुसार यह पाया गया है कि सरकारी विद्यालयों में लड़कियों का कक्षा 8 के बाद ड्रॉपआउट रेट बहुत अधिक है।

गतिविधि–2 : बालिका शिक्षा सम्बन्धी बाधाएँ

(क) कुटुम्ब/सामुदायिक बाधाएँ

क्षेत्र	परिणाम	रणनीति	समाधान/सुझाव
शिक्षा की प्रत्यक्ष लागत • विद्यालय शिक्षण फीस • विद्यालय जाने सम्बंधित अन्य व्यय– कपड़े, किताबें इत्यादि।	परिवार प्रत्यक्ष लागत को देने में सक्षम ना होने के कारण बालिकाएँ विद्यालय जाने में असमर्थ जेण्डर आयाम– यदि बालक एवं बालिका में किसी एक को चुनना हो तो परिवार बालक को अहमियत देता है।	• निःशुल्क शिक्षा (बालिकाओं के लिये) पक्ष समर्थन। • बालिका शिक्षण की महत्ता से सम्बन्धित जागरूकता पैदा करना। • गरीबी उन्मूलन सम्बंधी रणनीति खोजना।	• प्रोत्साहन के रूप में छात्रवृत्ति, अनुवृत्ति, भोजन, विद्यालय सम्बन्धित। • सामग्री उपलब्ध कराना। • पोषाहार का प्रावधान।
शिक्षा की अप्रत्यक्ष लागत	बालक/बालिका के विद्यालय जाने की स्थिति में हो रही	• बालिका शिक्षा के लिए जागरूकता फैलाना/	• लचीली विद्यालय समय सारणी।

क्षेत्र	परिणाम	रणनीति	समाधान / सुझाव
• बालश्रम एवं परिवार के पालन–पोषण के लिए श्रम।	हानि को परिवार चुकाने में समर्थ नहीं होते हैं। बालिकाएँ घर के अन्य सदस्यों के काम पर जाने के दौरान कार्यों एवं भाई / बहनों की देखरेख के लिए विद्यालय नहीं आ पातीं।	संवेदनशीलता पैदा करना।	• छोटे–छोटे भाई बहनों की देखभाल के कार्यक्रम चलाना। • माता / पिता एवं अन्य परिवारजनों को शिक्षित करना।
• अभिवृत्ति एवं प्रथाएँ • परम्परागत सामाजिक / धार्मिक मान्यताएं • लिंग भेद के प्रति रूढ़िबद्धता। • शिक्षा से होने वाले लाभों की जानकारी का अभाव। • जल्दी शादी, महिलाओं की कमजोर स्थिति और पितृ सत्तात्मक समाज अक्सर लड़कियों की शिक्षा पर कम प्राथमिकता देता है।	समाज में बालिकाओं की स्वीकृत भूमिकाओं के संदर्भ में शिक्षा मूल्यवान है या नहीं इसको अप्रासंगिक रूप में देखा जाता है। स्कूली शिक्षा और जल्दी सीखने में माता–पिता की सीमित भागीदारी।	• लड़कियों की शिक्षा के महत्त्व एवं स्कूली शिक्षा के पूरा होने के लिए संवेदीकरण। • विद्यालयों को अधिक सुरक्षित बनाने के लिए समर्थन।	• राष्ट्रीय नामांकन दिवस • सांस्कृतिक रूप से उपयुक्त स्कूली शिक्षा को बढ़ावा देना। • लिंग–जागरूकता प्रशिक्षण। • बेहतर अभिभावक जागरूकता सम्बन्धी कार्यक्रम • गांव समितियों, माता–पिता, शिक्षक संघों आदि द्वारा लड़कियों की शिक्षा में भागीदारी को सुनिश्चित करना।
• स्वास्थ्य संबंधित मुद्दे • पोषण की कमी • स्वच्छता एवं सफाई।	• लड़कियों को अक्सर परिवार एवं काम के लिए शिक्षा से वंचित रहना पड़ता है एवं यह भी देखा गया है कि लड़कों को लड़कियों से अधिक भोजन मिलता है।	• परिवार को जागरूक करना। • पोषण के महत्त्व को बालक / बालिका के संदर्भ में अभिभावकों को बताना।	• स्कूल, समुदाय एवं परिवार में प्रभावित बच्चों की देखभाल एवं सहायता प्रदान करना। • स्वच्छता एवं पोषण कार्यक्रमों को लागू करना।
विद्यालय सम्बन्धित बाधाएँ			
• घर के आसपास विद्यालय का ना होना।	• गैर नामांकन या नामांकन के बाद गैर उपस्थिति के बाद ड्रॉपआउट की संभावना **जेंडर आयाम** : • सुरक्षा सम्बंधी मुद्दों को ध्यान में रखते हुए परिवार जनों के घर पर ना होने की	• दूर क्षेत्रों में रहने वाली बालिकाओं की पहुँच सुनिश्चित करने के लिये समुदाय एवं सरकार सहायता प्रदान करे।	• स्कूल मैपिंग योजना एवं लक्ष्य निर्धारण • घर के करीब स्कूलों को बढ़ावा देना (क्लस्टर स्कूल, अनौपचारिक स्कूल के माध्यम से)

क्षेत्र	परिणाम	रणनीति	समाधान/सुझाव
	स्थिति में लड़कियों के विद्यालय जाने पर पाबंदी।		• लड़कियों के लिए आवासीय स्कूल की सुविधा।
• खराब गुणवत्ता की शिक्षा • अप्रशिक्षित शिक्षक • पुरानी शिक्षण विधाएँ • स्कूल कैलेण्डर में लचीलेपन का अभाव	• बालिकाओं की अनियमितता, ड्रॉपआउट, प्राथमिक से माध्यमिक तक सीमित उन्नयन। • लिंग आयाम : लड़कियों को अक्सर गैर व्यवसायिक कार्यक्रमों में ढकेल दिया जाता है।	• लिंग के प्रति संवेदनशीलता को बढ़ाने के लिये प्रशिक्षण • शिक्षकों के क्षमता संवर्धन • बालिकाओं की सक्रिय भागीदारी को बढ़ावा देना।	• शिक्षक प्रशिक्षण • नयी तकनीकों का शिक्षण प्रशिक्षण प्रक्रिया में समावेश • स्कूल कैलेण्डर का लचीलापन • समुदाय की भागीदारी
नीति एवं व्यवस्था संबंधी बाधाएँ			
• अपर्याप्त कानूनी ढ़ाँचे • अनिवार्य शिक्षा • बाल श्रम • विद्यालय में पुनः नामांकन	• व्यवहारिक रूप में सभी के लिये अनिवार्य शिक्षा का ना होना। • लिंग आयाम	• अनिवार्य शिक्षा कानून के कार्यान्वयन के लिए पक्ष समर्थन • क्षय कानूनों के कार्यान्वयन के लिए पक्ष समर्थन	• बालिका शिक्षा समर्थन नीतियों का क्रियान्वयन
• मौजूदा राष्ट्रीय ढ़ाँचे में शिक्षा का अलगाव	• शिक्षा योजनाओं का गरीबी उन्मूलन एवं राष्ट्रीय विकास योजना से गठबन्धन का ना होना। • शिक्षा को गरीबी उन्मूलन में एक निवेश के रूप में ना देखना। • लिंग आयाम राष्ट्रीय विकास में महिलाओं की भूमिका, बालिकाओं की शिक्षा में निवेश पर, आर्थिक और सामाजिक रिटर्न एवं महत्त्वपूर्ण कारकों में राष्ट्रीय योजनाओं में सम्मिलित ना होना।	• शिक्षा योजनाओं एवं राष्ट्रीय विकास योजनाओं में समन्वयन के लिए समर्थन	• राष्ट्रीय स्तर पर विगत 5 वर्षों में स्कूलों के नामांकन एवं ड्रॉपआउट सम्बंधी आंकड़ों के अनुसार समावेशित शिक्षा की योजना का निर्माण एवं क्रियान्वयन

जेण्डर संवेदनशीलता एवं लैंगिक समानता पर प्रस्तुतीकरण।

विद्यालयों को समावेशी, संवेदनशील और जिम्मेदार बनाना!
लिंग समानता के लिए पहल

SIQE, RCSE

उद्देश्य और ढाँचा

जेण्डर समता क्यों –

– यह न्याय व मूल अधिकार की बात है।
– सतत विकास के लिये समावेश एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता।
– सशक्तीकरण के लिये एक उपकरण।

लैंगिक समानता क्यों? (परिस्थिति को आंकड़ों के माध्यम से समझना)

– विद्यालयों को बालिका मित्र विद्यालय बनाने वाले प्रमुख कारक।
– हमारे स्कूलों के संदर्भ में क्या चुनौतियाँ हैं ?
– आगे क्या– जेण्डर समानता कैसे सुनिश्चित करें ?

स्थिति को समझना

– प्राथमिक स्तर पर GER-108 एवं उच्च प्राथमिक पर 82 है।
– प्राथमिक स्तर पर NER-85 एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर 61 है।
– GER एवं NER का अन्तर लगभग 23 प्रतिशत अंक हैं?

जिसका मतलब है 23 प्रतिशत कम उम्र एवं अधिक उम्र के बच्चों का होना

– 13 जिलों में बालिका NER 60 प्रतिशत से नीचे है– शेष बालिकाओं पर तत्काल ध्यान देने एवं उन्हें व्यवस्था में बनाए रखने की ज़रूरत है।
– बच्चे जो पीछे जा रहे हैं, ड्रापआउट हो रहे हैं, उनमें 65 प्रतिशत से अधिक बालिकाएँ हैं।
– प्राथमिक स्तर पर ठहराव दर 76 प्रतिशत एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर 55 प्रतिशत है।
– 12 जिलों में प्राथमिक स्तर पर बालिकाओं की ठहराव दर 50 प्रतिशत से नीचे है।
– 18 जिलों में GER में लैंगिक अन्तर 5 प्रतिशत से ज्यादा है, सिरोही (22 प्रतिशत) जैसलमेर (21 प्रतिशत) जालौर (18 प्रतिशत) सिरोही (22 प्रतिशत) बाड़मेर (13 प्रतिशत)।

सफलता के लिए महत्त्वपूर्ण रणनीतियों की पहचान

उपर्युक्त आँकड़े बालिका शिक्षा में ठहराव को बनाए रखने की तत्काल ज़रूरत को दर्शाते हैं। बालिका शिक्षा को सुनिश्चित करने के कई कारक हैं लेकिन जहाँ तक स्कूल वातावरण से इसका संबंध है, शिक्षकों को विद्यालयों को सुरक्षित एवं बालिकाओं के लिए समावेशी बनाने की प्राथमिक जिम्मेदारी है।

छात्राओं और महिला शिक्षिकाओं को आपके स्कूल में क्यों आना चाहिए ?

- आपके विद्यालय के बारे में किन्हीं भी 5 कारणों को समुदाय में विज्ञापित करें जिससे समुदाय अपनी बालिकाओं का नामांकन आपके विद्यालय में कराएँ।
- जेण्डर संबंधित मुद्दों को स्थानीय संदर्भ, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और भौगोलिक परिस्थितियों के संदर्भ में विश्लेषित करें।
- प्रतिभागी कुछ अच्छे उदाहरण समूह के साथ साझा कर सकते हैं।

चुनौतियाँ

समुदाय व परिवारों के संदर्भ में चुनौतियाँ –

- अनपढ़/अनभिज्ञ माता–पिता, भाई–बहन की देखभाल/घरेलू कार्य, सुरक्षा, जल्दी शादी, प्रवास, मौसमी बाध्यता (कृषि) इत्यादि।

स्कूली बाधाएँ –

- पहुँच– स्कूल का दूर होना, स्कूल के भीतर बुनियादी सुविधाओं की कमी। (शौचालय इत्यादि)
- ठहराव– कक्षा– कक्षीय प्रक्रियाएँ, स्वास्थ्य की स्थिति, शिक्षक की प्रतिक्रिया।
- बालिकाओं की उपस्थिति, सुरक्षा एवं सीखने के अवसर की कमी।
- भागीदारी– निर्णय लेना, स्कूल की गतिविधियाँ एवं कक्षा–कक्षीय प्रक्रियाएँ।

हम क्या कर सकते हैं ?

व्यक्तिगत स्तर पर –

- समस्या को समझना एवं स्वीकार करना।

स्कूल स्तर पर – संयुक्त रूप से स्कूल व एसएमसी/एसडीएमसी के साथ

- स्थानीय संदर्भ में बाधा उत्पन्न करने वाले कारकों की पहचान।
- जेण्डर के आधार पर विद्यालय की प्रोफाइल तैयार करना।
- लक्ष्यों का निर्धारण।
- स्कूल और समुदाय की कमज़ोरियों एवं ताकतों का विश्लेषण।
- कार्य योजना/रणनीतियों का निर्माण।

स्कूल स्तर पर, सभी हितधारकों के साथ –

– बच्चों, शिक्षकों एवं समुदाय के माध्यम से कार्ययोजना/रणनीति को लागू करना।
– समीक्षा एवं उनके आधार पर रणनीतियों में संशोधन।

आओ कोशिश करें कि –

स्कूल मैपिंग –

– स्कूल से बाहर रह गए बच्चों की संख्या (बालिकाओं पर विशेष ध्यान के साथ)।
– बालक एवं बालिकाओं का नया नामांकन सुनिश्चित करना।
– औसत मासिक नियमित उपस्थिति सुनिश्चित करना व अनियमित बालिकाओं की पहचान।
– प्राथमिक से उच्च प्राथमिक, उच्च प्राथमिक से सैकण्डरी, सैकण्डरी से सीनियर सैकण्डरी में जाने के समय ठहराव पर ध्यान देना।
– विद्यालय समापन तक ठहराव सुनिश्चित करने का प्रयास।
– अधिगम स्तरों पर विशेष ध्यान।
– स्वास्थ्य स्तर।
– विवाहित बालक एवं बालिकाओं की संख्या।
– बाल अधिकार, सामाजिक मुद्दों, स्वास्थ्य एवं जीवन कौशल आदि की विशेषताओं पर विचार–विमर्श।

कुछ प्रक्रियाएँ जो बालिका शिक्षा को मदद कर सकती हैं –

– साफ शौचालयों का होना।
– महावारी सम्बन्धी चीज़ों की विद्यालय में उपलब्धता।
– छोटे भाई–बहनों की विद्यालय में देखभाल हेतु आँगनवाड़ी सेविका की सहायता।
– समुदाय (विशेष रूप से माताओं) को विद्यालय से जोड़ना।
– बालिका शिक्षा से सम्बन्धित अच्छे उदाहरणों को बच्चों से साझा करना।

अवसर देना –

– बाल–सभा, खेल–कूद, स्काउट एवं गाइड, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, कक्षा मॉनीटर होने इत्यादि के संदर्भ में समान अवसर देना।
– बच्चे एवं बच्चियों से समान अपेक्षाएँ रखना।
– लड़कियों को कक्षा–कक्षीय प्रक्रिया के दौरान उनके उज्जवल भविष्य के लिए प्रोत्साहित करना।
– बच्चियों को अपने भविष्य के संदर्भ में खुलकर सपने देखने व आकांक्षाएँ रखने हेतु सहायता करना।
– बच्चे–बच्चियों में, शिक्षक–बच्चियों में व शिक्षक–अभिभावकों के बीच लगातार संवाद होना।
– बच्चियों को भी विद्यालय संचालन में नेतृत्व की भूमिका निभाने हेतु प्रोत्साहित करना।
– मीना मंच जैसे– मंचों का प्रयोग करना।

यह ध्यान रखना की –

- बच्चियाँ विद्यालय में सुरक्षित महसूस कर रही हैं।
- बैठक व्यवस्था में गैर बराबरी नहीं है।
- बालिकाएँ विद्यालय में खुलकर/सुरक्षित महसूस करते हुए आ–जा सकती हैं।
- शिक्षक बालिकाओं की समस्याओं को सुनते व समझते हैं।
- बालिकाओं को स्वयं की सुरक्षा हेतु प्रशिक्षण देना।
- बालिकाओं के साथ की जा रही बातचीत में ऐसे शब्दों का प्रयोग ना करें जो उनमें हीन भावना जगा सकते हैं।
- गरिमा पेटी हो, जिसकी सहायता से बालिकाएँ अपनी बात खुलकर कह सकें।

हाँ यह प्राप्त किया जा सकता है –

- कुछ सफलता की कहानियाँ साझा कर सकते हैं।
- परिवहन/अनुरक्षण अध्ययन।
- मीना मंच/अध्यापिका मंच केस–स्टडी।
- शिक्षक का छोटा सा प्रयास लड़के/लड़कियों के जीवन पर चिरस्थायी प्रभाव डालेगा, इस बात पर बल दें।
- अपने विद्यालय की समस्त प्रक्रियाओं को समावेशित एवं बालकेन्द्रित बनाएं एवं जाति, वर्ग, आर्थिक स्थिति, सांस्कृतिक एवं वंशानुक्रम के परे बनाने पर बल दें।

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम भारत के लोग, भारत को एक **संपूर्ण प्रभुत्व–संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य** बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,**
विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म
और उपासना की **स्वतंत्रता,**
प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**

प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सब में
व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता
और अखंडता सुनिश्चित करने वाली **बंधुता**

बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवम्बर, 1949 ई0 (मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी, संवत् दो हजार छह विक्रमी) को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

स्टेट इनिशिएटिव फॉर क्वॉलिटि एज्यूकेशन

आदर्श विद्यालय योजना–माध्यमिक शिक्षा विभाग, राजस्थान सरकार

सार्वजनिक विद्यालयों में
बालकेन्द्रित शिक्षा–शास्त्र,
सतत समग्र आकलन पद्धति एवं
सामुदायिक सहभागिता के माध्यम से
सभी बच्चों की
समान गुणवत्तायुक्त प्राथमिक शिक्षा में
सफलता सुनिश्चित करने का संकल्प

An Endeavor to Ensure
Successful Completion of
Quality Primary Education
for all Children in Govt. Schools
through the approaches
of child centered pedagogy,
continuous & comprehensive assessment
and community participation

सब बच्चे अच्छा सीख सकते हैं
सभी शिक्षक अच्छा सिखा सकते हैं।

RCSE
राजस्थान माध्यमिक शिक्षा परिषद्
डॉ. राधाकृष्णन् शिक्षा संकुल,
ब्लॉक-6, जवाहर लाल नेहरू मार्ग, जयपुर-302017